UNIVERSAL
LIBRARY

OU_186352

UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H 81 S43M Accession No. H 313

Author . सुभद्राकुमारी चौहान

Title मुकुल

This book should be returned on or before the date last marked below.

मुकुल

[संशोधित और परिवर्धित संस्करण]

श्रीमती सुभद्राकुमारी चौहान

भारती-भवन, आरा

प्रकाशक—
देवराज,
भारती-भवन,
आरा।

Checked 1965

तीसरी बार—१०००

मुद्रक—
बी. के. बर्मन,
युनिवर्सिटी प्रेस,
पटना।

स्मृति-चिन्ह

बची हुई हैं स्मृति की ये कलियाँ कर लो इनको स्वीकार।
ठुकराना मत इन्हें जानकर मेरा छोटा-सा उपहार॥

सहसा हुई पुकार ! मातृ—
मंदिर में मुझे बुलाया क्यों ?
जान – बूझकर सोई थी,
फिर जननी ! मुझे जगाया क्यों ?

* ❀ ❀

इस बुंदेलों की झाँसी में
शस्त्रों बिना तार कैसा ?
देश–प्रेम की मतवाली को
जननी पुरस्कार कैसा ?

❀ ❀ ❀

हर पत्थर पर लिखा जहाँ
बलिदान लक्ष्मी बाई का।
कौन मूल्य है वहाँ, सुभद्रा
की कविता–चतुराई का

इन कविताओं को यह रूप देने के लिए मैंने कुछ भी नहीं किया। मेरे पास अपनी कविताओं का न तो कोई संग्रह था और न मुझे ठीक-ठीक यही याद था कि मेरी कौन कविता कब, कहाँ छपी है। मेरी कविताओं के प्रति प्रफुल्ल का जो अकपट स्नेह है, यह संग्रह उसी का परिणाम है। प्रफुल्ल ने ही, न जाने कहाँ-कहाँ से, इतनी कविताएँ इकट्ठी की हैं, इनका क्रम लगाया है और इन्हें हर तरह से सजाने का आयोजन किया है। मैं तो केवल अपने उस भाई के इस कार्य को स्नेह-भरी आँखों से देखती-भर रही हूँ।

आज, जब यह पुस्तक साहित्य के बाज़ार में जाने के लिए तैयार है, मुझे कुछ भय-सा हो रहा है। लेकिन, फिर सोचती हूँ, मुझे भय किस बात का? कविताएँ अच्छी हों या बुरी, मेरी हैं और मुझे प्यारी भी बहुत हैं। मैं इनके बारे में कुछ कहना नहीं चाहती। चाहूँ भी तो कुछ कह नहीं सकती। और इसीलिए, मौन रहकर ही, प्रसन्नता-पूर्वक यह पुस्तक जनता के हाथों में देती हूँ।

३६, राइट टाउन, जबलपुर
१३ नवम्बर ३०

—सुभद्रा कुमारी

प्रकाशक का निवेदन

(तीसरे संस्करण की विज्ञप्ति)

'मुकुल' की हिंदी में पर्याप्त ख्याति हो चुकी है। इसके दो संस्करण प्रयाग के ओमा बंधु आश्रम से प्रकाशित हुए थे, अब इसके प्रकाशन का अधिकार हमने ले लिया है और यह तीसरा संस्करण हम प्रकाशित कर रहे हैं। हमारा विश्वास है, पिछले संस्करणों की भाँति ही हिंदी के पाठक इस संस्करण को भी अपनाकर हमें बाधित करेंगे।

—प्रकाशक

कविताएँ

फूल के प्रति	१
मुरझाया फूल	२
कलह-कारण	३
चलते समय	४
भ्रम	५
समर्पण	६
ठुकरा दो या प्यार करो	८
स्मृतियाँ	११
जाने दे	१४
शिशिर-समीर	१७
पारितोषिक का मूल्य	२०
चिंता	२३
प्रियतम से	२४
मानिनि राधे !	२५
आहत की अभिलाषा	२६
जल-समाधि	३१
मेरा नया बचपन	३६
बालिका का परिचय	४२
इसका रोना	४४

झाँसी की रानी ४७
राखी की चुनौती ५६
विजयी मयूर ६१
जलियाँवाला बाग में वसंत ६३
मेरी कविता ६८
राखी ७०
विजयादशमी ७३
मातृ-मंदिर में ७६
मातृ-मंदिर में ८४
मातृ-मंदिर में ८७
झंडे की इज्जत में ९०
मेरी टेक ९१
विदाई ९२
विदा ९४
स्वागत ९७
स्वागत-गीत १०१
स्वदेश के प्रति १०३
मत जाओ ! १०४
विस्मृत की स्मृति १०६
पुरस्कार कैसा ? १०९
परिशिष्ट (शब्दार्थ और आलोचना) ११२

मुकुल

मधुबाला

बच्चन—लिखित गीतों का सुंदर संग्रह। ये वही गीत हैं, जिन्हें सुनकर काव्य-रस-विलासी हिंदी-जनता झूम-झूम उठी है और जिसके आमोदमय परिमल-परागसे हिंदी का साहित्योद्यान सुरभित हो उठा है। हम से माँगिए :—

भारती-भवन, आरा

फूल के प्रति

डाल पर के मुरझाए फूल !
हृदय में मत कर वृथा गुमान।
नहीं हैं सुमन कुंज में अभी
इसी से है तेरा संमान ॥

मधुप जो करते अनुनय विनय
बने तेरे चरणों के दास।
नई कलियों को खिलती देख
नहीं आवेंगे तेरे पास ॥

सहेगा वह कैसे अपमान ?
उठेगा वृथा हृदय में शूल।
भुलावा है, मत करना गर्व
डाल पर के मुरझाए फूल !!

मुरझाया फूल

यह मुरझाया हुआ फूल है,
इसका हृदय दुखाना मत ।
स्वयं बिखरने वाली इसकी
पंखड़ियाँ बिखराना मत ॥

गुजरो अगर पास से इसके
इसे चोट पहुँचाना मत ।
जीवन की अंतिम घड़ियों में
देखो, इसे रुलाना मत ॥

अगर हो सके तो ठंढी—
बूँदें टपका देना प्यारे
जल न जाय संतप्त हृदय
शीतलता ला देना प्यारे !!

कलह-कारण

कड़ी आराधना करके बुलाया था उन्हें मैंने।
पदों को पूजने के ही लिए थी साधना मेरी॥
तपस्या नेम व्रत करके रिझाया था उन्हें मैंने।
पधारे देव, पूरी हो गई आराधना मेरी॥

उन्हें सहसा निहारा सामने सकोच हो आया।
मुँदीं आँखें सहज ही लाज से नीचे झुकी थी मैं॥
कहूँ क्या प्राणधन से यह हृदय में सोच हो आया।
वही कुछ बोल दें पहले, प्रतीक्षा में रुकी थी मैं॥

प्रचानक ध्यान पूजा का हुआ, झट आँख जो खोली।
नहीं देखा उन्हें, बस सामने सूनी कुटी देखी॥
हृदयधन चल दिए, मैं लाज से उनसे नहीं बोली।
गया सर्वस्व, अपने आपको दूनी लुटी देखी॥

चलते समय

तुम मुझे पूछते हो "जाऊँ"?
मैं क्या जवाब दूँ तुम्हीं कहो!
'जा···' कहते रुकती है जबान
किस मुंह से तुमसे कहूँ रहो?

सेवा करना था जहाँ मुझे
कुछ भक्ति-भाव दरसाना था।
उन कृपा-कटाक्षों का बदला
बलि होकर जहाँ चुकाना था॥

मैं सदा रूठती ही आई,
प्रिय! तुम्हें न मैंने पहचाना।
वह मान वाण-सा चुभता है,
अब देख तुम्हारा यह जाना॥

भ्रम

देवता थे वे, हुए दर्शन, अलौकिक रूप था।
देवता थे, मधुर संमोहन स्वरूप अनूप था॥
देवता थे, देखते ही बन गई थी भक्त मैं।
हो गई उस रूप-लीला पर अटल आसक्त मैं॥

देर क्या थी? यह मनोमंदिर यहाँ तैयार था।
वे पधारे, यह अखिल जीवन बना त्यौहार था॥
झाँकियों की धूम थी, जगमग हुआ संसार था।
सो गई सुख नींद में, आनंद अपरंपार था॥

किंतु उठकर देखती हूँ, अंत है जो पूर्ति थी।
मैं जिसे समझे हुए थी देवता, वह मूर्ति थी॥

समर्पण

सूखी-सी अधखिली कली है,
परिमल नहीं, पराग नहीं।
किंतु कुटिल भौंरों के चुंबन-
का है इस पर दाग़ नहीं॥

तेरी अतुल कृपा का बदला
नहीं चुकाने आई हूँ।
केवल पूजा में ये कलियाँ
भक्ति-भाव से लाई हूँ॥

प्रणय – जल्पना चिंत्य – कल्पना
मधुर वासनाएँ प्यारी ।
मृदु अभिलाषा, विजई आशा
सजा रही थीं फुलवारी ॥

किंतु गर्व का झोंका आया,
यदर्पि गर्व वह था तेरा ।
उजड़ गई फुलवारी सारी
बिगड़ गया सब कुछ मेरा ॥

बची हुई स्मृति की ये कलियाँ
मैं बटोर कर लाई हूँ ।
तुझे सुझाने, तुझे रिझाने
तुझे मनाने आई हूँ ॥

प्रेम–भाव से हो, अथवा हो
दया–भाव से ही स्वीकार ।
ठुकराना मत, इसे जानकर
मेरा छोटा–सा उपहार ॥

ठुकरा दो या प्यार करो

देव ! तुम्हारे कई उपासक
कई ढंग से आते हैं ।
सेवा में बहुमूल्य भेंट वे
कई रंग के लाते हैं ॥

धूमधाम से साजबाज से
मंदिर में वे आते हैं।
मुक्तामणि बहुमूल्य वस्तुएँ
लाकर तुम्हें चढ़ाते हैं॥

मैं ही हूँ ग़रीबिनी ऐसी
जो कुछ साथ नहीं लाई।
फिर भी साहस कर मंदिर में
पूजा करने को आई॥

धूप-दीप-नैवेद्य नहीं है
झाँकी का शृंगार नहीं।
हाय! गले में पहनाने को
फूलों का भी हार नहीं॥

मैं कैसे स्तुति करूँ तुम्हारी
है स्वर में माधुर्य नहीं।
मन का भाव प्रकट करने को
वाणी में चातुर्य नहीं॥

नहीं दान है, नहीं दक्षिणा
खाली हाथ चली आई ।
पूजा की विधि नहीं जानती
फिर भी नाथ ! चली आई ॥

पूजा और पुजापा प्रभुवर !
इसी पुजारिन को समझो ।
दान-दक्षिणा और निछावर
इसी भिखारिन को समझो ॥

मैं उन्मत्त, प्रेम की लोभी
हृदय दिखाने आई हूँ ।
जो कुछ है, बस यही पास है,
इसे चढ़ाने आई हूँ ॥

चरणों पर अर्पित है, इसको
चाहो तो स्वीकार करो ।
यह तो वस्तु तुम्हारी ही है,
ठुकरा दो या प्यार करो ॥

स्मृतियाँ

क्या कहते हो ? किसी तरह भी
भूलूँ और भुलाने दूँ ?
गत जीवन को तरल मेघ-सा,
स्मृति-नभ में मिट जाने दूँ ?

शांति और सुख से ये
जीवन के दिन शेष बिताने दूँ ?
कोई निश्चित मार्ग बनाकर
चलूँ, तुम्हें भी जाने दूँ ?

कैसा निश्चित मार्ग ? हृदय-धन !
समझ नहीं पाती हूँ मैं।
वही समझने एक बार फिर,
क्षमा करो, आती हूँ मैं ॥

जहाँ तुम्हारे चरण, वहीं पर
पद-रज बनी पड़ी हूँ मैं।
मेरा निश्चित मार्ग यही है,
ध्रुव-सी अटल अड़ी हूँ मैं ॥

भूलो तो सर्वस्व ! भला वे
दर्शन की प्यासी घड़ियाँ ।
भूलो मधुर मिलन को, भूलो
बातों की उलझी लड़ियाँ ॥

भूलो प्रीति—प्रतिज्ञाओं को,
आशाओं, विश्वासों को ।
भूलो अगर भूल सकते हो,
आँसू और उसाँसों को ॥

मुझे छोड़कर तुम्हें प्राणधन !
सुख या शांति नहीं होगी।
यही बात तुम भी कहते थे,
सोचो, भ्रांति नहीं होगी ॥

सुख को मधुर बनाने वाले,
दुख को भूल नहीं सकते।
सुख में कसक उठूँगी मैं प्रिय!
मुझको भूल नहीं सकते॥

मुझको कैसे भूल सकोगे,
जीवन - पथ - दर्शक मैं थी।
प्राणों की थी प्राण, हृदय की,
सोचो तो, हर्षक मैं थी॥

मैं थी उज्ज्वल स्फूर्ति, पूर्ति
थी प्यारी अभिलाषाओं की।
मैं ही तो थी मूर्ति तुम्हारी
बड़ी - बड़ी आशाओं की॥

आओ, चलो, कहाँ जाओगे,
मुझे अकेली छोड़ सखे!
बँधे हुए हो हृदय - पाश में,
नहीं सकोगे तोड़ सखे!!

जाने दे

कठिन प्रयत्नों से सामग्री
मैं बटोर कर लाई थी।
बड़ी उमंगों से मंदिर में,
पूजा करने आई थी॥

पास पहुँच कर जो देखा तो,
आहा! द्वार खुला पाया।
जिसकी लगन लगी थी, उसके
दर्शन का अवसर आया॥

हर्ष और उत्साह बढ़ा, कुछ
लज्जा, कुछ संकोच हुआ।
उत्सुकता, व्याकुलता कुछ-कुछ,
कुछ संभ्रम, कुछ सोच हुआ॥

मन में था विश्वास कि उनके
अब तो दर्शन पाऊँगी।
प्रियतम के चरणों पर अपना
मैं सर्वस्व चढ़ाऊँगी॥

कह दूँगी अंतरतम की, मैं
उनसे नहीं छिपाऊँगी।
मानिनि हूँ, पर मान तजूँगी,
चरणों पर बलि जाऊँगी॥

पूरी हुई साधना मेरी,
मुझको परमानंद मिला।
किंतु बढ़ी तो हुआ अरे क्या?
मंदिर का पट बंद मिला॥

निठुर पुजारी ! यह क्या ? मुझ पर
तुझे न तनिक दया आई ?
किया द्वार को बंद हाय ! मैं
प्रियतम को न देख पाई !!

करके कृपा पुजारी ! मुझको
ज़रा वहाँ तक जाने दे।
मुझको भी थोड़ी - सी पूजा
प्रियतम तक पहुँचाने दे ॥

छूने दे उनके चरणों को,
जीवन सफल बनाने दे !
खोल, खोल दे द्वार, पुजारी !
मन की व्यथा मिटाने दे ॥

बहुत बड़ी आशा से आई हूँ,
मत कर तू मुझे निराश।
एक बार, बस एक बार, तू
जाने दे प्रियतम के पास ॥

शिशिर-समीर

शिशिर-समीरण ! किस धुन में हो,
कहो किधर तुम जाती हो ?
धीरे - धीरे क्या कहती हो ?
या यों ही कुछ गाती हो ?

क्यों खुश हो ? क्या धन पाया है ?
क्यों इतनी इठलाती हो ?
शिशिर - समीरण ! सच बतला दो,
किसे ढूँढ़ने जाती हो ?

मेरी भी क्या बात सुनोगी,
कह दूँ अपना हाल सखी ?
किंतु प्रार्थना है, न पूछना,
आगे और सवाल सखी !!

फिरती हुई पहुँच तुम जाओ,
अगर कभी उस देश सखी !
मेरे निठुर श्याम को मेरा,
दे देना संदेश सखी !!

मिल जावें यदि तुम्हें अकेले,
हो ऐसा संयोग सखी !
किंतु देखना वहाँ न होवें,
और दूसरे लोग सखी !!

खूब उन्हें समझाकर कहना,
मेरे दिल की बात सखी !
विरह - विकल चातकी मर रही,
जल - जलकर दिन रात सखी !!

मेरी इस कारुण्य दशा का,
पूरा चित्र बना देना।
स्वयं आँख से देख रही हो,
यह उनको बतला देना॥

दरस – लालसा जिला रही है,
कह देना समझा देना।
नासमझी यदि कहीं हुई हो,
तो उसको सुलझा देना॥

कहना किसी तरह वे सोचें,
मिलने की तदबीर सखी!
सही नहीं जाती अब मुझसे,
यह वियोग की पीर सखी!!

चूर चूर हो गया हृदय यह,
सह-सहकर आघात सखी!
शिशिर–समीरण! भूल न जाना,
कह देना सब बात सखी!!

मेरी भी क्या बात सुनोगी,
कह दूँ अपना हाल सखी ?
किंतु प्रार्थना है, न पूछना,
आगे और सवाल सखी !!

फिरती हुई पहुँच तुम जाओ,
अगर कभी उस देश सखी !
मेरे निठुर श्याम को मेरा,
दे देना संदेश सखी !!

मिल जावें यदि तुम्हें अकेले,
हो ऐसा संयोग सखी !
किंतु देखना वहाँ न होवें,
और दूसरे लोग सखी !!

खूब उन्हें समझाकर कहना,
मेरे दिल की बात सखी !
विरह - विकल चातकी मर रही,
जल - जलकर दिन रात सखी !!

मेरी इस कारुण्य दशा का,
पूरा चित्र बना देना।
स्वयं आँख से देख रही हो,
यह उनको बतला देना॥

दरस – लालसा जिला रही है,
कह देना समझा देना।
नासमझी यदि कहीं हुई हो,
तो उसको सुलझा देना॥

कहना किसी तरह वे सोचें,
मिलने की तदबीर सखी!
सही नहीं जाती अब मुझसे,
यह वियोग की पीर सखी!!

चूर चूर हो गया हृदय यह,
सह-सहकर आघात सखी!
शिशिर–समीरण! भूल न जाना,
कह देना सब बात सखी!!

पारितोषिक का मूल्य

मधुर मधुर मीठे शब्दों में
मैंने गाना गाया एक।
वे प्रसन्न हो उठे खुशी से
शाबासी दी मुझे अनेक॥

निश्छल मन से मैंने उनकी
की सभक्ति सादर सेवा।
मिला मुझे उनसे कृतज्ञता—
का सुमधुर मीठा मेवा॥

सुंदर वस्त्राभूषण ले
मैंने रुचि से शृंगार किया।
मेरी सुंदरता का उनने
झट तस्वीर उतार लिया!'

प्रेमोन्मत्त हो गई, मैंने
उन्हें प्रेम निज दिखलाया।
उसी समय बदले में उनसे
एक प्रेम-चुंबन पाया॥

शाबासी, कृतज्ञता अथवा
उस तस्वीर खिंचाने से।
हुई खुशी से मैं पागल-सी
प्रिय का चुंबन पाने से॥

घटने लगा किंतु धीरे-धीरे
वह पागलपन मेरा।
उतर गया वह नशा, हो गया
कुछ उदास - सा मन मेरा॥

गाना एक और गाया, अब
केवल मन बहलाने को।
जन-सेवा के लिए चल पड़ी
भरसक कष्ट मिटाने को॥

हाँ शृंगार भी किया मैंने,
बनी प्रेम - दीवानी भी।
देखा अब मैं अति प्रसन्न थी
और अधिक हरषानी भी॥

छिपा हुआ कोई सुनता था
सुललित मधुर गीत मेरा ।
सेवा औ शृंगार प्रेम था
जिसमें बढ़ता बहुतेरा ॥

सुननेवाला बोला, किंतु न
शब्द सुनाई देते थे ।
करते हुए प्रशंसा विकसित
नेत्र दिखाई देते थे ॥

"पहले में यह बात नहीं थी,
है यह तो अपूर्व संगीत ।"
मेरी प्रसन्नता ने प्रतिध्वनि-
किया कि प्यारे वह संगीत—

चुका रही थी शाबासी के
पुरस्कार का कोरा दाम ।
वही न्यूनता ही थी बस
उस पुरस्कार का सच्चा दाम ॥

चिंता

लगे आने, हृदयधन से—
कहा मैंने कि मत आओ।
कहीं हो प्रेम में पागल
न पथ में ही मचल जाओ॥

कठिन है मार्ग, मुझको
मंजिलें वे पार करनी हैं।
उमंगों की तरंगें बढ़ पड़ें—
शायद फिसल जाओ॥

तुम्हें कुछ चोट आ जाए
कहीं लाचार लौटूँ मैं।
हठीले प्यार से व्रत-भंग
की घड़ियाँ निकट लाओ॥

प्रियतम से

बहुत दिनों तक हुई परीक्षा
अब रूखा व्यवहार न हो।
अजी, बोल तो लिया करो तुम
चाहे मुझ पर प्यार न हो।

जिसकी होकर रही सदा मैं
जिसकी अब भी कहलाती।
क्यों न देख इन व्यवहारों को
टूक-टूक फिर हो छाती?

मानिनि राधे !

थीं मेरा आदर्श बालपन से
तुम मानिनि राधे !
तुम-सी बन जाने को मैंने
व्रत नियमादिक साधे ॥

अपने को माना करती थी
मैं वृषभानु - किशोरी ।
भाव - गगन के कृष्णचंद्र की
थी मैं चतुर चकोरी ॥

था छोटा - सा गाँव हमारा
छोटी - छोटी गलियाँ ।
गोकुल उसे समझती थी मैं
गोपी सँग की अलियाँ ॥

कुटियों में रहती थी, पर
मैं उन्हें मानती कुंजें।
माधव का संदेश समझती
सुन मधुकर की गुंजें ॥

बचपन गया, नया रँग आया
और मिला वह प्यारा।
मैं राधा बन गई, न था वह
कृष्णचंद्र से न्यारा ॥

किन्तु कृष्ण यह कभी किसी पर
ज़रा प्रेम दिखलाता।
नख-शिख से मैं जल उठती हूँ
खान-पान नहिं भाता ॥

खूनी भाव उठें उसके प्रति
जो हो प्रिय का प्यारा।
उसके लिए हृदय यह मेरा
बन जाता हत्यारा ॥

मुझे बता दो मानिनि राधे!
प्रीति-रीति वह न्यारी।
क्यों कर थी उस मनमोहन पर
अविचल भक्ति तुम्हारी!

तुम्हें छोड़कर बन बैठे जो
मथुरा-नगर-निवासी।
कर कितने ही ब्याह, हुए जो
सुख-सौभाग्य-विलासी॥

सुनती उनके गुण-गण को ही,
उनको ही गाती थी।
उन्हें याद कर सबकुछ भूली
उन पर बलि जाती थी॥

नयनों के मृदु फूल चढ़ाती
मानस की मूरत पर।
रही ठगी-सी जीवन भर
उस क्रूर श्याम-सूरत पर।

श्यामा कहलाकर, हो बैठी
बिना दाम की चेरी।
मृदुल उमंगों की तानें थीं—
तू मेरा, मैं तेरी ॥

जीवन का न्यौछावर हा हा !
तुच्छ उन्होंने लेखा।
गए, सदा के लिए गए
फिर कभी न मुड़कर देखा ॥

अटल प्रेम फिर भी कैसे है
कह दो राधारानी !
कह दो मुझे जली जाती हूँ,
छोड़ो शीतल पानी ॥

ले आदेश तुम्हारा, रह - रह
मन को समझाती हूँ।
किंतु बदलते भाव न मेरे
शांति नहीं पाती हूँ ॥

आहत की अभिलाषा

जीवन को न्यौछावर करके तुच्छ सुखों को लेखा।
अर्पण कर सबकुछ चरणों पर तुम में ही सब देखा॥
थे तुम मेरे इष्ट देवता, अधिक प्राण से प्यारे।
तन से, मन से, इस जीवन से कभी न थे तुम न्यारे॥

अपना तुमको समझ, समझती थी, हूँ सखी तुम्हारी।
तुम मुझको प्यारे हो, मैं हूँ तुम्हें प्राण-सी प्यारी॥
दुनिया की परवाह नहीं थी, तुम में ही थी भूली।
पाकर तुम-सा सुहृद गर्व से फिरती थी मैं फूली॥

तुमको सुखी देखना ही था जीवन का सुख मेरा।
तुमको दुखी देखकर पाती थी मैं कष्ट घनेरा॥
मेरे तो गिरधर गोपाल तुम और न दूजा कोई।
गाते-गाते कई बार हो प्रेम-विकल हूँ रोई॥

मुकुल

मेरे हृदय-पटल पर अंकित है प्रिय नाम तुम्हारा।
हृदय देश पर पूर्ण रूप से है साम्राज्य तुम्हारा॥
है विराजती मन-मंदिर में सुंदर मूर्ति तुम्हारी।
प्रियतम की उस सौम्य-मूर्ति की हूँ मैं भक्त पुजारी॥

किंतु हाय! जब अवसर पाकर मैंने तुमको पाया।
उस निःस्वार्थ प्रेम की पूजा को तुमने ठुकराया॥
मैं फूली फिरती थी बनकर प्रिय चरणों की चेरी।
किंतु तुम्हारे निठुर हृदय में नहीं चाह थी मेरी॥

मेरे मन में घर कर तुमने निज अधिकार बढ़ाया।
किंतु तुम्हारे मन में मैंने तिल भर ठौर न पाया॥
अब जीवन का ध्येय यही है तुमको सुखी बनाना।
लगी हुई सेवा में प्यारे! चरणों पर बलि जाना॥

मुझे भुला दो या ठुकरा दो, कर लो जो कुछ भावे।
लेकिन यह आशा का अंकुर नहीं सूखने पावे॥
करके कृपा कभी दे देना शीतल जल के छींटे।
अवसर पाकर वृक्ष बने यह, दे फल शायद मीठे॥

जल-समाधि

अति कृतज्ञ हूँगी मैं तेरी
ऐसा चित्र बना दे तू।
दुखित हृदय के भाव हमारे
उस पर सब दिखला दे तू॥

प्रभु की निर्दयता, जीवों की
कातरता दरसा दे तू।
मृत्यु समय के गौरव को भी
भली-भाँति झलका दे तू॥

भाव न बतलाए जाते हैं,
शब्द न ऐसे पाती हूँ।
इसीलिए हे चतुर चितेरे!
तुझको विनय सुनाती हूँ॥

देख सम्हलकर, खूब सम्हलकर
ऐसा चित्र बनाना तू।
सुंदर इठलाती सरिता पर
मंदिर-घाट दिखाना तू॥

कहीं पास के पुल से बढ़कर
धारा तेज़ बहाना तू।
चट्टानों से टकराकर फिर
भारी भँवर घुमाना तू॥

उसी भँवर के निकट, किनारे
युवक खेलते हों दो-चार।
हँसते और हँसाते हों वे
निज चंचलता के अनुसार॥

किंतु हाय! धारा में पड़कर
तीन युवक बह जाते हों।
थके हुए फिर किसी शिला से
टकराकर रुक जाते हों॥

उनके मुँह पर बच जाने का
कुछ संतोष दिखा देना।
किंतु साथ ही घबराहट में
उत्कंठा झलका देना॥

गहरी धारा में नीचे जब
एक दृश्य यह दिखलाना।
रो-रो उसे बहा मत देना
देख, सम्हलकर रुक जाना॥

धारा में सुंदर वलिष्ठ-तन
युवक एक दिखलाता हो।
क्रूर शिलाओं में पड़कर जो
तड़प - तड़प रह जाता हो ॥

तौ भी मंद हँसी की रेखा
उसके मुँह पर दिखलाना।
नहीं मौत से डरता था वह,
हँस सकता था बतलाना ॥

किंतु साथ ही धीरे-धीरे
बेसुध होता जाता हो।
क्षण क्षण में सर्वस्व दीन का
मानो लुटता जाता हो ॥

ऊपर आसमान में धुँधला
कुछ प्रकाश दिखला देना।
एक ओर श्यामा तरुणी का
सुंदर रूप बता देना ॥

बिखरे बाल विरस वदना कुछ
व्याकुल-सी दिखलाती हो।
गोदी में दुधमुहीं बालिका—
लिए वहाँ पर आती हो॥

आशा-भरी दृष्टि से प्रभु की—
ओर देखती जाती हो।
दुखिया का सर्वस्व न लुटने—
पावे, यही मनाती हो॥

इसके बाद चितेरे जो तू
चाहे, वही बना देना।
अपनी ही इच्छा से अंतिम
दृश्य यहाँ दिखला देना॥

चाहे तो प्रभु के चेहरे पर
करुणा-भाव दिखाना तू।
अथवा मंद हँसी की रेखा,
या निर्लज्ज बनाना तू॥

मेरा नया बचपन

बार बार आती है मुझको
मधुर याद बचपन तेरी।
गया, ले गया तू जीवन की
सब से मस्त खुशी मेरी॥

चिंता - रहित खेलना - खाना
वह फिरना निर्भय स्वच्छंद।
कैसे भूला जा सकता है
बचपन का अतुलित आनंद ?

ऊँच-नीच का ज्ञान नहीं था
छुआछूत किसने जानी ?
वनी हुई थी अहा ! झोपड़ी—
और चीथड़ों में रानी॥

किए दूध के कुल्ले मैंने
चूस अँगूठा सुधा पिया ।
किलकारी कल्लोल मचाकर
सूना घर आबाद किया ॥

रोना और मचल जाना भी
क्या आनंद दिखाते थे !
बड़े – बड़े मोती – से आँसू
जयमाला पहनाते थे ॥

मैं रोई, माँ काम छोड़कर
आई, मुझको उठा लिया ।
झाड़ – पोंछकर चूम – चूम
गीले गालों को सुखा दिया ॥

दादा ने चंदा दिखलाया,
नेत्र – नीर द्रुत दमक उठे ।
धुली हुई मुसकान देखकर
सब के चेहरे चमक उठे ॥

मुकुल

वह सुख का साम्राज्य छोड़कर,
मैं मतवाली बड़ी हुई ।
लुटी हुई, कुछ ठगी हुई-सी
दौड़ द्वार पर खड़ी हुई ॥

लाजभरी आँखे थीं मेरी
मन में उमँग रँगीली थी ।
तान रसीली थी कानों में
चंचल छैल छबीली थी ॥

दिल में एक चुभन-सी थी
यह दुनिया सब अलबेली थी।
मन में एक पहेली थी
मैं सब के बीच अकेली थी ॥

मिला, खोजती थी जिसको
हे बचपन ! ठगा दिया तू ने।
अरे ! जवानी के फंदे में
मुझको फँसा दिया तू ने ॥

सब गलियाँ उसकी भी देखीं
उसकी ख़ुशियाँ न्यारी हैं।
प्यारी, प्रीतम की रँग-रलियों
की स्मृतियाँ भी प्यारी हैं॥

माना मैंने युवा-काल का
जीवन ख़ूब निराला है।
आकांक्षा, पुरुषार्थ, ज्ञान का
उदय मोहनेवाला है॥

किंतु यहाँ झंझट है भारी
युद्ध-क्षेत्र संसार बना।
चिंता के चक्कर में पड़कर
जीवन भी है भार बना॥

आजा बचपन! एकबार फिर
दे दे अपनी निर्मल शांति।
व्याकुल व्यथा मिटाने वाली
वह अपनी प्राकृत विश्रांति॥

मुकुल

वह भोली - सी मधुर सरलता
वह प्यारा जीवन निष्पाप ।
क्या फिर आकर मिटा सकेगा
तू मेरे मन का संताप ?

मैं बचपन को बुला रही थी
बोल उठी बिटिया मेरी ;
नदन – वन सी फूल उठी
यह छोटी - सी कुटिया मेरी ।।

'माँ ओ' कहकर बुला रही थी
मिट्टी खाकर आई थी ।
कुछ मुँह में कुछ लिए हाथ में
मुझे खिलाने आई थी ।।

पुलक रहे थे अंग, दृगों में
कौतूहल था छलक रहा ।
मुंह पर थी आह्लाद - लालिमा
विजय - गर्व था झलक रहा ।।

मैंने पूछा "यह क्या लाई ?"
बोल उठी वह "माँ, काओ।"
हुआ प्रफुल्लित हृदय खुशी से
मैंने कहा—"तुम्हीं खाओ ॥"

पाया मैंने बचपन फिर से
बचपन बेटी बन आया।
उसकी मंजुल मूर्ति देखकर
मुझ में नवजीवन आया ॥

मैं भी उसके साथ खेलती—
खाती हूँ, तुतलाती हूँ।
मिलकर उसके साथ स्वयं
मैं भी बच्ची बन जाती हूँ ॥

जिसे खोजती थी बरसों से
अब जाकर उसको पाया।
भाग गया था मुझे छोड़कर
वह बचपन फिर से आया ॥

बालिका का परिचय

यह मेरी गोदी की शोभा
सुख - सुहाग की है लाली ।
शाही शान भिखारिन की है
मनो - कामना - मतवाली ॥

दीप - शिखा है अंधकार की
घनी घटा की उजियाली ।
ऊषा है यह कमल-भृंग की
है पतझड़ की हरियाली ॥

सुधाधार यह नीरस दिल की
मस्ती मगन तपस्वी की ॥
जीवित ज्योति नष्ट नयनों की
सच्ची लगन मनस्वी की ॥

बीते हुए बालपन की यह
क्रीड़ा - पूर्ण वाटिका है ।
वही मचलना, वही किलकना
हँसती हुई नाटिका है ॥

मेरा मंदिर, मेरी मसजिद
काबा-काशी यह मेरी।
पूजा-पाठ, ध्यान-जप-तप है
घट-घट-वासी यह मेरी।

कृष्णचंद्र की क्रीड़ाओं को
अपने आँगन में देखो।
कौशल्या के मातृमोद को
अपने ही मन में लेखो॥

प्रभु ईसा की क्षमाशीलता
नबी मुहम्मद का विश्वास।
जीव दया जिनवर गौतम की
आओ देखो इसके पास॥

परिचय पूछ रहे हो मुझसे,
कैसे परिचय दू इसका?
वही जान सकता है इसको,
माता का दिल है जिसका॥

इसका रोना

(१)

तुम कहते हो मुझको इसका—
रोना नहीं सुहाता है।
मैं कहती हूँ, इस रोने से
अनुपम सुख छा जाता है॥

सच कहती हूँ, इस रोने को
छवि को ज़रा निहारोगे।
बड़ी-बड़ी आँसू की बूँदों—
पर मुक्तावलि वारोगे॥

(२)

ये नन्हे-से ओंठ और
यह लंबी-सी सिसकी देखो
यह छोटा-स गला और
यह गहरी-सी हिचकी देखो ॥

कैसी करुणा-जनक दृष्टि है !
हृदय उमड़कर आया है !
छिपे हुए आत्मीय भाव को
यह उभाड़कर लाया है ॥

(३)

हँसी बाहरी चहल-पहल को—
ही बहुधा दरसाती है।
पर रोने में अंतरतम तक
की हलचल मच जाती है ॥

जिससे सोई हुई आत्मा—
जगती है अकुलाती है।
छूटे हुए किसी साथी को
अपने पास बुलाती है ॥

(४)

मैं सुनती हूँ कोई मेरा
मुझको अहा! बुलाता है।
जिसकी करुणापूर्ण चीख से
मेरा केवल नाता है॥

मेरे ऊपर वह निर्भर है
खाने, पीने, सोने में।
जीवन की प्रत्येक क्रिया में
हँसने में क्यों रोने में॥

(५)

मैं हूँ उसकी प्रकृत संगिनी
उसकी जन्म—प्रदाता हूँ।
वह मेरी प्यारी बिटिया है
मैं ही उसकी माता हूँ॥

तुमको सुनकर चिढ़ आती है
मुझको होता है अभिमान।
जैसे भक्तों की पुकार सुन
गर्वित होते हैं भगवान॥

झाँसी की रानी

सिंहासन हिल उठे, राजवंशों ने भृकुटी तानी थी,
बूढ़े भारत में भी आई फिर से नई जवानी थी,
गुमी हुई आज़ादी की क़ीमत सब ने पहचानी थी,
दूर फिरंगी को करने की सब ने मन में ठानी थी,

चमक उठी सन सत्तावन में
वह तलवार पुरानी थी।
बुंदेले हरबोलों के मुँह
हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो
झाँसी वाली रानी थी॥

कानपूर के नाना की मुँहबोली बहन 'छबीली' थी,
लक्ष्मीबाई नाम, पिता की वह संतान अकेली थी,
नाना के सँग पढ़ती थी वह, नाना के सँग खेली थी,
बरछी, ढाल, कृपाण, कटारी उसकी यही सहेली थी,

वीर शिवाजी की गाथाएँ
उसको याद जबानी थी।
बुंदेले हरबोलों के मुँह
हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो
झाँसी वाली रानी थी॥

लक्ष्मी थी या दुर्गा थी वह स्वयं वीरता की अवतार,
देख मराठे पुलकित होते उसकी तलवारों के वार,
नकली युद्ध, व्यूह की रचना और खेलना खूब शिकार,
सैन्य घेरना, दुर्ग तोड़ना, ये थे उसके प्रिय खिलवार,

महाराष्ट्र-कुल-देवी उसकी
भी आराध्य भवानी थी।
बुंदेले हरबोलों के मुँह
हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो
झाँसी वाली रानी थी॥

हुई वीरता की वैभव के साथ सगाई झाँसी में,
ब्याह हुआ रानी बन आई लक्ष्मीबाई झाँसी में,
राजमहल में बजी बधाई खुशियाँ छाई झाँसी में,
सुभट बुंदेलों की विरुदावलि-सी वह आई झाँसी में,

चित्रा ने अर्जुन को पाया,
शिव से मिली भवानी थी।
बुंदेले हरबोलों के मुँह
हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो
झाँसी वाली रानी थी॥

उदित हुआ सौभाग्य, मुदित महलों में उजियाली छाई
किंतु कालगति चुपके-चुपके काली घटा घेर लाई,
तीर चलाने वाले कर में उसे चूड़ियाँ कब भाई,
रानी विधवा हुई हाय! विधि को भी नहीं दया आई,

मुकुल

निःसंतान मरे राजाजी
रानी शोक-समानी थी ।
बुंदेले हरबोलों के मुँह
हमने सुनी कहानी थी ।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो
झाँसी वाली रानी थी ॥

बुझा दीप झाँसी का तब डलहौज़ी मन में हरषाया,
राज्य हड़प करने का उसने यह अच्छा अवसर पाया,
फ़ौरन फ़ौजें भेज दुर्ग पर अपना झंडा फहराया,
लावारिस का वारिस बनकर ब्रिटिश राज्य झाँसी आया,

अश्रुपूर्ण रानी ने देखा
झाँसी हुई बिरानी थी ।
बुंदेले हरबोलों के मुँह
हमने सुनी कहानी थी ।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो
झाँसी वाली रानी थी ॥

अनुनय विनय नहीं सुनता है, विकट शासकों की माया,
व्यापारी बन दया चाहता था जब यह भारत आया,
डलहौजी ने पैर पसारे अब तो पलट गई काया,
राजाओं नव्वाबों का भी उसने पैरों ठुकराया,

रानी दासी बनी, बनी यह
दासी अब महरानी थी।
बुंदेले हरबोलों के मुँह
हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो
झाँसी वाली रानी थी॥

छिनी राजधानी देहली की लखनउ छीना बातों-बात,
कैद पेशवा था बिठूर में, हुआ नागपुर का भी घात,
उदैपूर, तंजोर, सतारा, करनाटक की कौन बिसात,
जब कि सिंध, पंजाब, ब्रह्म पर अभी हुआ था वज्र निपात,

बंगाले, मद्रास आदि की
भी तो वही कहानी थी।
बुंदेले हरबोलों के मुँह
हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो
झाँसी वाली राना थी॥

रानी रोई रनिवासों में, बेगम ग़म से थी बेज़ार,
उनके गहने-कपड़े बिकते थे कलकत्ते के बाज़ार,
सरे-आम नीलाम छापते थे अंग्रेज़ों के अख़बार,
'नागपूर के ज़ेवर ले लो' 'लखनउ के लो नौलख हार',

यों परदे की इज्ज़त परदेशी
के हाथ बिकानी थी।
बुंदेले हरबोलों के मुँह
हमने सुनो कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो
झाँसी वाली रानी थी॥

कुटियों में थी विषम वेदना, महलों में आहत अपमान,
वीर सैनिकों के मन में था अपने पुरखों का अभिमान,
नाना धुंधूपंत पेशवा जुटा रहा था सब सामान,
बहिन छबीली ने रण-चंडी का कर दिया प्रकट आह्वान,

हुआ यज्ञ प्रारंभ उन्हे तो
सोई ज्योति जगानी थी।
बुंदेले हरबोलों के मुँह
हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो
झाँसी वाली रानी थी।।

महलों ने दी आग, झोपड़ी ने ज्वाला सुलगाई थी,
यह स्वतंत्रता की चिनगारी अंतरतम से आई थी,
झाँसी चेती, दिल्ली चेती, लखनउ लपटें छाई थी,
मेरठ, कानपूर, पटना ने भारी धूम मचाई थी,

जबलपूर, कोल्हापुर में भी
कुछ हलचल उकसानी थी।
बुंदेले हरबोलों के मुँह
हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो
झाँसी वाली रानी थी॥

इस स्वतंत्रता-महायज्ञ में कई वीरवर आए काम,
नाना धंधूपंत, ताँतिया, चतुर अजीमुल्ला सरनाम,
अहमद शाह मौलवी, ठाकुर कुँवरसिंह सैनिक अभिराम,
भारत के इतिहास-गगन में अमर रहेंगे जिनके नाम,

लेकिन आज जुर्म कहलाती
उनकी जो क़ुरबानी थी।
बुंदेले हरबोलों के मुँह
हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो
झाँसी वाली रानी थी॥

इनकी गाथा छोड़ चलें हम झाँसी के मैदानों में,
जहाँ खड़ी है लक्ष्मीबाई मर्द बनी मर्दानों में,
लेफ्टिनेंट वौकर आ पहुँचा, आगे बढ़ा जवानों में,
रानी ने तलवार खींच ली, हुआ द्वंद्व असमानों में,

जख्मी होकर वौकर भागा,
उसे अजब हैरानी थी।
बुंदेले हरबोलों के मुँह
हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो
झाँसी वाली रानी थी॥

रानी बढ़ी, कालपी आई कर सौ मील निरंतर पार,
घोड़ा थककर गिरा भूमि पर, गया स्वर्ग तत्काल सिधार,
यमुना-तट पर अंग्रेजों ने फिर खाई रानी से हार,
विजयी रानी आगे चल दी, किया ग्वालियर पर अधिकार,

अंग्रेजों के मित्र सेंधिया
ने छोड़ी रजधानी थी।
बुंदेले हरबोलों के मुँह
हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो
झाँसी वाली रानी थी॥

विजय मिली, पर अंग्रेजों की फिर सेना घिर आई थी,
अबके जनरल स्मिथ संमुख था, उसने मुँह की खाई थी,
काना और मंदरा सखियाँ रानी के सँग आई थीं,
युद्धक्षेत्र में उन दोनों ने भारी मार मचाई थी,

पर, पीछे ह्यूरोज आ गया,
हाय! घिरी अब रानी थी।
बुंदेले हरबोलों के मुँह
हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो
झाँसी वाली रानी थी॥

तौ भी रानी मार काटकर चलती बनी सैन्य के पार,
किंतु सामने नाला आया, था यह संकट विषम अपार,
घोड़ा अड़ा, नया घोड़ा था, इतने में आ गए सवार,
रानी एक शत्रु बहुतेरे होने लगे वार पर वार,

घायल होकर गिरी सिंहिनी
उसे वीर-गति पानी थी।
बुंदेले हरबोलों के मुँह
हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो
झाँसी वाली रानी थी॥

रानी गई सिधार, चिता अब उसकी दिव्य सवारी थी,
मिला तेज से तेज, तेज की वह सच्ची अधिकारी थी,
अभी उम्र कुल तेइस की थी, मनुज नहीं अवतारी थी,
हमको जीवित करने आई बन स्वतंत्रता नारी थी,

दिखा गई पथ सिखा गई
हमको जो सीख सिखानी थी।
बुंदेले हरबोलों के मुँह
हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो
झाँसी वाली रानी थी॥

जाओ रानी, याद रखेंगे ये कृतज्ञ भारतवासी,
यह तेरा बलिदान जगावेगा स्वतंत्रता अविनाशी,
होवे चुप इतिहास, लगे सच्चाई को चाहे फाँसी,
हो मदमाती विजय, मिटा दे गोलों से चाहे झाँसी,

तेरा स्मारक तू ही होगी
तू खुद अमिट निशानी थी।
बुंदेले हरबोलों के मुँह
हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो
झाँसी वाली रानी थी॥

राखी की चुनौती

बहन आज फूली समाती न मन में।
तड़ित् आज फूली समाती न घन में ॥
घटा है न फूली समाती गगन में।
लता आज फूली समाती न बन में ॥

कहीं राखियाँ हैं, चमक है कहीं पर,
कहीं बूँद है, पुष्प प्यारे खिले हैं।
ये आई है राखी, सुहाई है पूनो,
बधाई उन्हें जिनको भाई मिले हैं॥

मैं हूँ बहन किंतु भाई नहीं है।
है राखी सजी पर कलाई नहीं है॥
हे भादों घटा किंतु छाई नहीं है।
नहीं है खुशी पर रुलाई नहीं है॥

मेरा बंधु माँ की पुकारों को सुनकर—
के तैयार हो जेलखाने गया है
छीनी हुई माँ की स्वाधीनता को
वह जालिम के घर में से लाने गया है॥

मुझे गर्व है किंतु राखी है सूनी।
वह होता, खुशी तो क्या होती न दूनी?
हम मंगल मनावें, वह तपता है धूनी।
है घायल हृदय, दर्द उठता है खूनी॥

है आती मुझे याद चित्तौर गढ़ की,
धधकती है दिल में वह जौहर की ज्वाला।
हैं माता-बहन रोके उसको बुझातीं,
कहो भाई, तुमको भी है कुछ कसाला?।

है, तो बढ़े हाथ, राखी पड़ी है।
रेशम-सी कोमल नहीं यह कड़ी है॥
अजी देखो लोहे की यह हथकड़ी है।
इसी प्रण को लेकर बहन यह खड़ी है॥

आते हो भाई? पुनः पूछती हूँ—
कि माता के बंधन की है लाज तुमको?
—तो बंदी बनो, देखो बंधन है कैसा,
चुनौती यह राखी की है आज तुमको॥

विजयो मयूर

तू गरजा, गरज भयंकर थी,
कुछ नहीं सुनाई देता था।
घनघोर घटाएँ काली थीं,
पथ नहीं दिखाई देता था॥

तूने पुकार की ज़ोरों की,
वह चमका, गुस्से में आया।
तेरी आहों के बदले में,
उसने पत्थर - दल बरसाया॥

तेरा पुकारना नहीं रुका.
तू डरा न उसकी मारों से।
आखिर को पत्थर पिघल गए,
आहों से और पुकारों से॥

तू धन्य हुआ, हम सुखी हुईं,
सुंदर नीला आकाश मिला।
चंद्रमा चाँदनी सहित मिला,
सूरज भी मिला, प्रकाश मिला॥

विजयी मयूर जब कूक उठे,
घन स्वयं आत्मदानी होंगे।
उपहार बनेंगे वे प्रहार,
पत्थर पानी - पानी होंगे॥

जालियाँवाला बाग़ में वसंत

यहाँ कोकिला नहीं, काक हैं शोर मचाते।
काले-काले कीट, भ्रमर का भ्रम उपजाते॥
कलियाँ भी अधखिली, मिली हैं कंटक कुल से।
ये पौधे, ये पुष्प, शुष्क हैं अथवा झुलसे॥

परिमल-हीन पराग दाग़-सा बना पड़ा है।
हा! वह प्यारा बाग़ खून से सना पड़ा है॥
आओ, प्रिय ऋतुराज! किंतु धीरे से आना।
यह है शोक-स्थान यहाँ मत शोर मचाना॥

वायु चले, पर मंद चाल से उसे चलाना।
दुख की आहें संग उड़ाकर मत ले जाना॥
कोकिल गावे, किंतु राग रोने का गावे।
भ्रमर करे गुंजार, कष्ट की कथा सुनावे॥

लाना सँग में पुष्प, न हों वे अधिक सजीले।
हा सुगंध भी मंद, आस से कुछ – कुछ गीले॥
किंतु न तुम उपहार - भाव आकर दरसाना।
स्मृति में पूजा - हेत यहाँ थोड़े बिखराना॥

कोमल बालक मरे यहाँ गोली खा – खाकर।
कलियाँ उनके लिए गिराना थोड़ी लाकर॥
आशाओं से भरे हृदय भी छिन्न हुए हैं।
अपने प्रिय परिवार – देश से भिन्न हुए हैं॥

कुछ कलियाँ अधखिली यहाँ इस लिए चढ़ाना।
करके उनकी याद अश्रु के ओस बहाना॥
तड़प – तड़प कर वृद्ध मरे हैं गोली खाकर।
शुष्क पुष्प कुछ वहाँ गिरा देना तुम जाकर॥

यह सब करना, किंतु
बहुत धीरे – से आना।
यह है शोक - स्थान
यहाँ मत शोर मचाना॥

मेरी कविता

मुझे कहा कविता लिखने को
लिखने बैठी मैं तत्काल।
पहले लिखा जालियाँ वाला,
कहा कि बस हो गए निहाल॥

तुम्हें और कुछ नहीं सूझता
ले-देकर वह वह खूनी बाग़।
रोने से अब क्या होता है,
धुल न सकेगा उसका दाग़॥

भूल उसे चल हँसें मस्त हो,
मैंने कहा – धरो कुछ धीर।
तुमको हँसते देख कहीं
फिर फ़ायर करे न डायर वीर॥

कहा–न मैं कुछ लिखने दूँगा,
मुझे चाहिए प्रेम – कथा।
मैंने कहा – नवेली है वह
रम्य – वदन है चंद्र यथा॥

अहा! मग्न हो उछल पड़े वे,
मैंने कहा – सुनो चुपचाप।
बड़ी – बड़ी – सी भोली आँखें,
केश – पाश ज्यों काले साँप॥

भोली - भाली आँखें देखो,
उसे नहीं तुम रुलवाना।
उसके मुँह से प्रेम - भरी,
कुछ मीठी बातें कहलाना॥

हाँ, वह रोती नहीं कभी भी,
और नहीं कुछ कहती है।
शून्य दृष्टि से देखा करती,
खिन्नमना - सी रहती है॥

कर के याद पुराने सुख को
कभी चौंक – सी पड़ती है ।
भय से कभी काँप जाती है,
कभी क्रोध में भरती है ॥

कभी किसी की ओर देखती
नहीं दिखाई देती है ।
हँसती नहीं, किंतु चुपके से
कभी – कभी रो लेती है ॥

ताज़े हल्दी के रँग से
कुछ पीली उसकी सारी है ।
लाल – लाल – से धब्बे हैं कुछ,
अथवा लाल किनारी है ॥

उसका छोर लाल ! संभव है,
हो वह ख़ूनी रँग से लाल ।
है सिंदूर – बिंदु से सज्जित
उसका अब भी कुछ – कुछ भाल ॥

अब भी है उसके पैरों में
बनी महावर की लाली ।
हाथों में मेंहदी की लाली,
वह दुखिया भोली – भाली ॥

उसी बाग़ की ओर शाम को
जाती हुई दिखाती है ।
प्रातःकाल सूर्योदय से
पहले ही फिर आती है ॥

लोग उसे पागल कहते हैं,
देखो, तुम न भूल जाना ।
तुम भी उसे न पागल कहना,
उसे क्लेश मत पहुँचाना ॥

उसे लौटती समय देखना,
रम्य बदन पीला – पीला !
सारी का वह लाल छोर भी
रहता है बिलकुल गीला ॥

डायन भी कहते हैं उसको
कोई कोई हत्यारे ।
उसे देखना, किंतु न ऐसी
गल्ती तुम करना प्यारे ।

बाईं ओर हृदय में धड़कन
कुछ उसके दिखलाती है ।
वह भी प्रतिदिन क्रम-क्रम से
कुछ धीमी होती जाती है ।।

किसी रोज संभव है उसकी
धड़कन बिलकुल मिट जावे ।
उसकी भोली भाली आँखें
हाय सदा को मुँद जावें ।।

उसको ऐसी दशा देखना
आँसू चार बहा देना ।
उसके दुख में दुखिया बनकर
तुम भी दुःख मना लेना ।।

राखी

भैया कृष्ण! भेजती हूँ मैं
राखी अपनी यह लो आज।
कई बार जिसको भेजा है
सजा-सजाकर नूतन साज॥

लो, आओ, भुजदंड उठाओ
इस राखी में बँध जाओ।
भरत-भूमि की रजभूमी को
एक बार फिर दिखलाओ॥

वीर चरित्र राजपूतों का
पढ़ती हूँ मैं राजस्थान।
पढ़ते-पढ़ते आँखों में
छा जाता राखी का आख्यान॥

मैंने पढ़ा, शत्रुओं को भी
जब-जब राखी भिजवाई।
रक्षा करने दौड़ पड़ा वह
राखी बंद शत्रु भाई॥

किंतु देखना है, यह मेरी
राखी क्या दिखलाती है।
क्या निस्तेज कलाई पर ही
बँधकर यह रह जाती है ?

देखो भैया, भेज रही हूँ
तुमको — तुमको राखी आज।
साखी राजस्थान बना कर
रख लेना राखी की लाज॥

हाथ काँपता, हृदय धड़कता
है मेरी भारी आवाज़।
अब भी चौंकाता है जलियां—
वाले का वह गोलंदाज॥

यम की सूरत उन पतितों का
पाप भूल जाऊँ कैसे ?
अंकित आज हृदय में है
फिर मन को समझाऊँ कैसे ?

बहनें कई सिसकती हैं हा!
सिसक न उनकी मिट पाई।
लाज गँवाई, गाली पाई
तिस पर गोली भी खाई॥

डर है कहीं न मार्शल – ला का
फिर से पड़ जावे घेरा।
ऐसे समय द्रौपदी जैसा
कृष्ण सहारा है तेरा॥

बोलो, सोच – समझकर बोलो,
क्या राखी बँधवाओगे?
भीर पड़ेगी, क्या तुम रक्षा
करने दौड़े आओगे?

यदि हाँ तो यह लो मेरी
इस राखी को स्वीकार करो।
आकर भैया, बहन 'सुभद्रा'
के कष्टों का भार हरो॥

विजया-दशमी

विजये ! तू ने तो देखा है
वह विजयी श्रीराम सखी !
धर्मभीरु सात्विक निश्छलमन
वह करुणा का धाम सखी !!

वनवासी असहाय और फिर
हुआ विधाता वाम सखी !
हरी गई सहचरी जानकी
वह व्याकुल घनश्याम सखी !!

कैसे जीत सका रावण को
रावण था सम्राट सखी !
सोने की लंका थी उसकी
सजे राजसी ठाट सखी !!

रक्षक राक्षस सैन्य सबल था,
प्रहरी सिंधु विराट सखी !
नर ही नहीं देव डरते थे
सुनकर उसकी डाट सखी !!

राम - समान हमारा भी तो
रहा नहीं अब राज सखी !
राजदुलारों के तन पर हैं
सजे फकीरी साज सखी !!

हो असहाय भटकते फिरते
बनवासी से आज सखी।
सीता - लक्ष्मी हरी किसी ने
गई हमारी लाज सखी ॥

आशा का संदेश सुनाती
तू हम को प्रति वर्ष सखी।
इसीलिए तेरे आने पर
होता अतिशय हर्ष सखी ॥

रामचंद्र की विजय कथा का
भेद बता आदर्श सखी।
पराधीनता से छूटे यह
प्यारा भारतवर्ष सखी ॥

पर इतने ही से होता है,
किसे भला संतोष सखी।
जरा हृदय तो देख, भरे हैं
यहाँ रोष के कोष सखी ॥

वह दिन था, जब दिया किसी ने
रण में ज़रा प्रचार सखी।
मिटा दिया यम को भी हमने
हुआ हमारा वार सखी॥

और, आज तू देख, देख ये
सबल बचाते प्राण सखी।
रण से पिछड़ पड़ें, कहते हैं
करो देश का त्राण सखी॥

छिड़ा आज यह पाप पुण्य का
युद्ध अनोखा एक सखी।
मर जावें, पर साथ न देंगे
पापों का, है टेक सखी॥

सबलों को कुछ सीख सिखाओ
मरें करें उद्धार सखी।
दानव दल दें, पाप मसल दें,
मेटें अत्याचार सखी॥

सबल पुरुष यदि भीरु बनें
तो हमको दे वरदान सखी !
अबलाएँ उठ पड़ें देश में
करें युद्ध घमसान सखी !!

पंद्रह कोटि असहयोगिनियाँ
दहला दें ब्रह्मांड सखी !
भारत - लक्ष्मी लौटाने को
रच दें लंका - कांड सखी !!

खाना पीना सोना जीना
हो पापी का भार सखी !
मर - मरकर पापों को कर दें
हम जगती से छार सखी !!

देखें फिर इस जगतीतल में
होगी कैसे हार सखी !
भारत - माँ की बेड़ी काटें
होवे बेड़ा पार सखी !!

दो, विजये ! वह आत्मिक बल दो,
वह हुंकार मचाने दो।
अपनी निर्बल आवाज़ों से
दुनिया को दहलाने दो ॥

"जय स्वतंत्रिणी भारत - माँ !"
यों कहकर मुकुट लगाने दो।
हमें नहीं, इस भूमंडल को
माँ पर बलि - बलि जाने दो ॥

छेड़ दिया संग्राम, मचेगी
गड़बड़ आठों याम सखी !
असहयोग सर तान खड़ा है
भारत का श्रीराम सखी !!

पापों के गढ़ टूट पड़ेंगे
रहना तुम तैयार सखी !
विजये ! हम - तुम मिल, कर लेंगी
अपनी माँ का प्यार सखी !!

मातृ-मंदिर में

वीणा बज – सी उठी, खुल गए नेत्र
और कुछ आया ध्यान ।
मुड़ने की थी देर, दिख पड़ा
उत्सव का प्यारा सामान ॥

जिसको तुतला – तुतला कर के
शुरू किया था पहली बार ।
जिस प्यारी भाषा में हमको
प्राप्त हुआ है माँ का प्यार ॥

उस हिंदू जन की ग़रीबिनी
हिंदी, प्यारी हिंदी का ।
प्यारे भारतवर्ष – कृष्ण की
उस प्यारी कालिंदी का ॥

है उसका ही समारोह यह
उसका ही उत्सव प्यारा ।
मैं आश्चर्य – भरी आँखों से
देख रही हूँ यह सारा ॥

जिस प्रकार कंगाल – बालिका
अपनी माँ धनहीना को ।
टुकड़ों की मुहताज आजतक
दुखिनी को, उस दीना को ॥

सुंदर वस्त्राभूषण – सज्जित
देख चकित हो जाती है ।
सच है या केवल सपना है
कहती है, रुक जाती है ॥

पर सुंदर लगती है, इच्छा—
यह होती है कर ले प्यार।
प्यारे चरणों पर बलि जाए
कर ले मन भर के मनुहार॥

इच्छा प्रबल हुई, माता के
पास दौड़कर जाती है।
वस्त्रों को सँवारती, उसको
आभूषण पहनाती है॥

उसी भाँति आश्चर्य मोदमय
आज मुझे झिझकाता है।
मन में उमड़ा हुआ भाव बस
मुँह तक आ रुक जाता है॥

प्रेमोन्मत्ता होकर तेरे पास
दौड़ आती हूँ मैं।
तुझे सजाने या सँवारने
में ही सुख पाती हूँ मैं॥

तेरी इस महानता में
क्या होगा मूल्य सजाने का?
तेरी भव्य मूर्ति को नक़ली
आभूषण पहनाने का ?

किंतु क्या हुआ माता ! मैं भी
तो हूँ तेरी ही संतान।
इसमें ही संतोष मुझे है
इसमें ही आनंद महान ॥

मुझ - सी एक - एक को बन तू
तीस कोटि की आज हुई ।
हुई महान, सभी भाषाओं—
की तू ही सरताज हुई ॥

मेरे लिए बड़े गौरव की
और गर्व की है यह बात।
तेरे ही द्वारा होवेगा
भारत में स्वातंत्र्य - प्रभात ॥

असहयोग पर मर - मिट जाना
यह जीवन तेरा होगा ।
हम होंगे स्वाधीन, विश्व का
वैभव धन तेरा होगा ॥

जगती के वीरों - द्वारा
शुभ पदवंदन तेरा होगा।
देवों के पुष्पों - द्वारा
अब अभिनंदन तेरा होगा ॥

तू होगी आधार, देश की
पार्लमेंट बन जाने में।
तू होगी सुख - सार, देश के
उजड़े क्षेत्र बसाने में ॥

तू होगी व्यवहार, देश के
बिछुड़े हृदय मिलाने में ।
तू होगी अधिकार, देशभर—
को स्वातंत्र्य दिलाने में ॥

मातृ-मंदिर में

व्यथित है मेरा हृदय-प्रदेश
चलूँ उसको बहलाऊँ आज।
बताकर अपना दुख-सुख उसे
हृदय का भार हटाऊँ आज॥
चलूँ माँ के पद-पंकज पकड़
नयन-जल से नहलाऊँ आज।
मातृ-मंदिर में मैंने कहा—
चलूँ दर्शन कर आऊँ आज॥

किंतु यह हुआ अचानक ध्यान
दीन हूँ, छोटी हूँ, अज्ञान!
मातृ-मंदिर का दुर्गम मार्ग
तुम्हीं बतला दो हे भगवान्!!

मार्ग के बाधक पहरेदार
सुना है ऊँचे - से सोपान।
फिसलते हैं ये दुर्बल पैर
चढ़ा दो मुझको हे भगवान् !!

अहा ! वे जगमग-जगमग जगीं
ज्योतियाँ दीख रही हैं वहाँ।
शीघ्रता करो, वाद्य बज उठे
भला मैं कैसे जाऊँ वहाँ ?
सुनाई पड़ता है कलगान
मिला दूँ मैं भी अपनी तान।
शीघ्रता करो, मुझे ले चलो
मातृ-मंदिर में हे भगवान्

चलूँ, मैं जल्दी से चढ़ चलूँ
देख लूँ माँ की प्यारी मूर्त्ति।
अहा ! वह मोठी - सी मुसकान
जागती होगी न्यारी स्फूर्ति ॥

उसे भी आती होगी याद ?
उसे ? हाँ, आती होगी याद ।
नहीं रूठूँगी मैं, लो, आज
सुनाऊँगी उसको फ़रयाद ।।

कलेजा माँ का, मैं संतान,
करेगी दोषों पर अभिमान ।
मातृ – वेदी पर घंटा बजा,
चढ़ा दो मुझको हे भगवान् !!
सुनूँगी माता की आवाज़,
रहूँगी मरने को तैयार ।
कभी भी उस वेदी पर देव !
न होने दूँगी अत्याचार ।।

न होने दूँगी अत्याचार
चलो, मैं हो जाऊँ बलिदान ।
मातृ - मंदिर में हुई पुकार
चढ़ा दो मुझको हे भगवान् !!

मातृ-मंदिर में

देव ! वे कुंजें उजड़ी पड़ीं,
और वह कोकिल उड़ ही गई।
हटाईं हमने लाखों बार
किंतु वे घड़ियाँ जुड़ ही गईं॥

विष्णु ने दिया दान ले लिया
शुक्लता गई, अँधेरा मिला।
मातृ मंदिर में सूने खड़े
मुक्ति के बदले मरना मिला॥

आह की कठिन लूह चल रही
नाश का घन-गर्जन हो रहा।
बूँद या बाण बरसने लगे
पापियों से तर्जन हो रहा ॥

अमर-लोचन के धन को लिए
चलो, चल पड़ें, खुले हैं द्वार।
गज़ी का शुक्लांबर ले चलें
मातृ-मंदिर में हुई पुकार ॥

जननि के दुख की घड़ियाँ कटें
सजावें पूजा का साहित्य।
आरती उतरे आदर - भरी
करों में लें नभ का आदित्य ॥

आज वे संदेशे सुन पड़ें
कटें पद - कंजों की जंजीर।
मुक्ति की मतवाली माँ उठे
उठावे बेटी - बेटे वीर ॥

पाप पृथ्वी पर से उठ जाय
पापियों से टूटे संबंध ।
प्यार, प्रतिभा, प्राणों की उठे
त्यागमय शीतल - मंद - सुगंध ॥

विजयिनी माँ के वीर सुपुत्र
पाप से असहयोग लें ठान ।
गुंजा डालें स्वराज्य की तान
और सब हो जावें बलिदान ॥

ज़रा ये लेखनियाँ उठ पड़ें
मातृ - भू को गौरव से मढ़ें ।
करोड़ों क्रांतिकारिणी मूर्ति
पलों में निर्भयता से गढ़ें ॥

हमारी प्रतिभा साध्वी रहे
देश के चरणों पर ही चढ़े ।
अहिंसा के भावों में मस्त
आज यह विश्व जीतना पढ़े ॥

झंडे की इज्ज़त में

धन्य हुई मैं आज, धन्य है
सखि ! सौभाग्य हमारा ।
जिसकी थी इच्छुका, मिला है
मुझे समय वह प्यारा ॥

माँ की वेदी पर बलि होने
का शुभ अवसर आया
जन्म सफल हो गया, आज ही
मैंने सब कुछ पाया ॥

विदा माँगती हूँ मैं सब से
लो, देखो, हूँ जाती ।
क़ौमी झंडे की इज्ज़त में
हूँ यह शीश चढ़ाती ॥

मेरी टेक

निर्धन हों धनवान, परिश्रम उनका धन हो ।
निर्बल हों बलवान, सत्यमय उनका मन हो ॥
हों स्वाधीन गुलाम, हृदय में अपनापन हो ।
इसी आन पर कर्मवीर ! तेरा जीवन हो ॥

तो, स्वागत सौ बार
करूँ आदर से तेरा ।
आ, कर दे उद्धार,
मिटे अंधेर-अँधेरा ॥

विदाई

कृष्ण – मंदिर में प्यारे बंधु
पधारो निर्भयता के साथ ।
तुम्हारे मस्तक पर हो सदा
कृष्ण का वह शुभचिंतक हाथ ।।

तुम्हारी दृढ़ता से जग पड़े
देश का सोया हुआ समाज।
तुम्हारी भव्य मूर्ति से मिले,
शक्ति वह विकट त्याग की आज॥

तुम्हारी दुख की घड़ियाँ बनें
दिलाने वाली हमें स्वराज्य।
हमारे हृदय बनें बलवान
तुम्हारी त्यागमूर्ति से आज॥
तुम्हारे देशबंधु यदि कभी
डरें, कायर हो पीछे हटें।
बंधु दो बहनों को वरदान
युद्ध में वे निर्भय मर मिटें॥

हजारों हृदय विदा दे रहे,
उन्हें संदेशा दो बस एक।
कटें तीसों करोड़ ये शीश,
न तजना तुम स्वराज्य की टेक॥

विदा

"गिरफ़्तार होने वाले हैं,
आता है वारंट अभी।"
धक्-सा हुआ हृदय, मैं सहमी
हुए विकल साशंक सभी॥

किंतु सामने दीख पड़े
मुस्कुरा रहे थे खड़े - खड़े।
रुके नहीं, आँखों से आँसू
सहसा टपके बड़े - बड़े ॥

"पगली, यों ही दूर करेगी
माता का यह रौरव कष्ट?"
रुका वेग भावों का, दीखा
अहा! मुझे यह गौरव स्पष्ट ॥

तिलक, लाजपत, श्रीगांधी जी
गिरफ्तार बहु बार हुए।
जेल गए, जनता ने पूजा,
संकट में अवतार हुए ॥

जेल! हमारे मनमोहन के
प्यारे पावन जन्म - स्थान!
तुझको सदा तीर्थ मानेगा
कृष्ण - भक्त यह हिंदुस्थान॥

मुकुल

मैं प्रफुल्ल हो उठी कि आहा !
आज गिरफ्तारी होगी ॥
फिर जो धड़का, क्या भैया की
सचमुच तैयारी होगी !!

आँसू छलके, याद आ गई,
राजपूत की वह बाला।
जिसने विदा किया भाई को
देकर तिलक और भाला ॥

सदियों सोई हुई वीरता
जागी, मैं भी वीर बनी।
जाओ भैया, विदा तुम्हें
करती हूँ मैं गंभीर बनी ॥

याद भूल जाना मेरी
उस आँसू वाली मुद्रा की।
कीजे यह स्वीकार बधाई
छोटी बहन 'सुभद्रा' की ॥

स्वागत

तेरे स्वागत को उत्सुक यह खड़ा हुआ है मध्य - प्रदेश।
अर्घ्यदान दे रही नर्मदा दीपक स्वयं बना दिवसेश॥

विंध्याचल अगवानी पर है
वन - श्री चँवर डुलाती है!
भोली - भाली जनता तेरा
अटपट स्वागत गाती है॥

आ मैया काँग्रेस! हमारी आकांक्षा की प्यारी मूर्ति!
राज्यहीन राजाओं के गत वैभव की स्वाभाविक पूर्ति!!

है स्वागत की स्फूर्ति तदपि
माँ! मन में होता है कुछ सोच।
आनँद में घबराहट - सी है,
है उत्साह और संकोच॥

हमें नहीं भय संगीनों का, चमक रहीं जो उनके हाथ।
ज़रा नहीं डर उन तोपों का, गरज रहीं जो बल के साथ॥

ढीठ सिपाही की हथकड़ियाँ
दमन नीति के वे क़ानून।
डरा नहीं सकते हैं हमको
यदपि बहावें प्रतिदिन खून॥

हम हिंसा का भाव त्याग कर विजयी, वीर, अशोक बने।
काम करेंगे वही कि जिससे लोक और परलोक बने॥

किंतु आज स्वागत की धुन में
हमें नहीं कुछ भी परवाह।
तुझको पाकर दीन – हीन भी
निज को समझ रहा नरनाह॥

है इतना उत्साह कि डर है, हम उन्मत्त न बन जावें
है इतना विश्वास कि भय है, हम गर्विष्ठ न कहलावें

इतना बल है प्रबल, कहीं हम अत्याचार न कर डालें।
यही सोच, संकोच यही, मर्यादा पार न कर डालें॥

अतः विनय है शांति सहित माँ!
हमको मार्ग सुझा देना।
भड़की हुई हृदय की ज्वाला
माँ! कर प्यार बुझा देना॥

लुटे हुए दीनों की आशा, तू दासों की उज्ज्वल रत्न।
भारतीय स्वातंत्र्य प्राप्ति की तू चिरजीवी सात्विक यत्न॥

मरे हुए को अमर बनाने—
वाली तू संजीवन मंत्र।
प्रिय स्वराज्य-संचालन का है
एकमात्र तू जीवित यंत्र॥

प्लासी, झाँसी, दिल्ली, पूना, हार गए, टूटी तलवार।
वीर मराठों, सिक्ख-गोरखों और पठानों का था वार॥

गरदन कटी हमारी रण में पड़ा हमारा ही हथियार।
पर मालिक बन गए और ही दिया दासता का उपहार ॥

ऐसे समय सहारा तेरा
है बच्चों की यही पुकार।
कर ये दूर धाक धमकी के
नौकरशाही के अधिकार ॥

वायु बहे स्वच्छंद भारती, भारत का फूले उद्यान।
नव वसंत के साथ भारती, देखे भारत का उत्थान ॥

आती हो वरदायिनि ! आओ,
आओ-आओ बारंबार ।
त्रुटियों की कुटिया प्रस्तुत है
और तुम्हारा है अधिकार ॥

इस कुटिया को महल समझना, हम हैं बालक अज्ञानी।
पूजा को तैयार खड़े हैं, स्वागत ! आओ महरानी ॥

स्वागत-गीत

कर्म के योगी, शक्ति-प्रयोगी,
देश – भविष्य सुधारियेगा ।
हाँ, वीर–वेश के, दीन-देश के,
जीवन – प्राण पधारियेगा ॥

तुम्हारा कर्म चढ़ाने को हमें डोर हुआ ।
तुम्हारी बातों से दिल में हमारे ज़ोर हुआ ॥
तुम्हें कुचलने को दुश्मन का जी कठोर हुआ ।
तुम्हारे नाम का हर ओर आज शोर हुआ ॥

हाँ, पर उपकारी राष्ट्र-विहारी,
कर्म का मर्म सिखाइयेगा ॥

तुम्हारे बच्चों को कष्टों में आज याद हुई
तुम्हारे आने से पूरी सभी मुराद हुई ॥
गुलामखानों में राष्ट्रीयता आबाद हुई।
मादरे हिंद यों बोली कि मैं आज़ाद हुई ॥

हाँ, दीन के भ्राता संकट त्राता,
जी की जलन बुझाइयेगा ॥

राष्ट्र ने कहा कि महायुद्ध का नियोग करो।
कँपा दो विश्व को, अब शक्ति का प्रयोग करो ॥
हटा दो दुश्मनों को, डट के असहयोग करो।
स्वतंत्र माता को करके स्वराज्य भोग करो ॥

हाँ, हिंसा-हारी, शस्त्र-प्रहारी,
रार की रीति सिखाइयेगा ॥

स्वदेश के प्रति

आ, स्वतंत्र प्यारे स्वदेश, आ,
स्वागत करती हूँ तेरा ।
तुझे देख कर आज हो रहा
दूना प्रमुदित मन मेरा ॥

आ, उस बालक के समान
जो है गुरुता का अधिकारी ।
आ, उस युवक-वीर-सा जिसको
विपदाएँ ही हैं प्यारी ॥

आ, उस सेवक के समान तू
विनयशील अनुगामी – सा ।
अथवा आ तू युद्धक्षेत्र में
कीर्ति – ध्वजा का स्वामी – सा ॥

आशा की सूखी लतिकाएँ
तुझको पा, फिर लहराईं ।
तूने अत्याचारी की कृतियाँ
हैं निर्भय दरसाईं ॥

मत जाओ

यों असहाय छोड़कर असमय
कैसे जाते हो भगवान ?
लौटो, तुम्हें न जाने देंगे,
दुखी देश के जीवन – प्राण !

भारत मैया की नैया के
चतुर खेवैया लौट चलो ।
इस कुसमय में साथ न छोड़ो,
रुक जाओ, ठहरो, सुन लो ॥

आशा – बेलि स्वदेश – भूमि की
यों न हाय ! मुरझाने दो ।
लौटो, लौटो, भारत के धन !
उसे ज़रा हरियाने दो ॥

जननि निछावर होगी तुम पर
जनता बलि – बलि जावेगी ।
श्रद्धा और प्रीति से तुमको
नयनों में बिठलावेगी ॥

लौटो, आओ, मंडाले में
मंदिर हम बनवा देंगे।
वहाँ हथकड़ी और बेड़ियों—
का घंटा टँगवा देंगे ॥

तुम बन जाना प्रमुख पुजारी
करते रहना नित टंकार।
हम सब मिलकर करें प्रार्थना
हो स्वराज्य का मंत्रोच्चार ॥

तब स्वतंत्रता देवी देगी
प्रमुदित हो प्यारा वरदान।
वह पहली जयमाल गले में
धारण करना तुम भगवान ॥

भारत का हो राजतिलक, तुम
तिलक यहीं के कहलाओ।
अमरपुरी बलि कर दो इस पर
यहीं रहो, हा ! मत जाओ ॥

विस्मृत की स्मृति

उधर गो – भक्त कहाता देश
इधर ये लाखों गायें कटें।
उधर करतीं वैतरणी पार
इधर ये हाय! छुरी से छटें ॥

उधर मचता है हाहाकार
इधर ये क़दम न पीछे हटें।
देखकर ये उलटे व्यवहार
हमारे हृदय शोक से फटें ॥

उधर तुम कहलाते गोपाल
इधर ये गौएँ दिन - दिन कटें।
कहो, तुम हो कह दो गोपाल
तुम्हें अब कौन नाम से रटें? ॥

बचाने को तुमने गो – वंश
उठाया था गोवर्धन हाथ।
किंतु अब गोवध होता देख
क्यों नहीं आते हो तुम नाथ? ॥

मनाते जन्म-दिवस ही रहे
कृष्ण ! तुम बोलो आए कहाँ ?
व्यर्थ क्यों धोखा देकर गए
कि "आऊँगा मैं फिर भी यहाँ ॥"

हुआ जब घर में बालक अहा !
समझने लगे कि आए कृष्ण ।
बधाए गाए लेकर नाम
तुम्हारा दर्शन किया सतृष्ण ॥

बनीं हम नँदरानी तत्काल
बनाया बालक को नँदलाल ।
बना घर – आँगन गोकुल रम्य
हुआ परिजन का हृदय निहाल ॥

किंतु वह जैसे बढ़ने लगा
हठी, अनयी, स्वार्थी हो चला ।
नहीं जनसेवा का कुछ भाव
कृष्ण, आशा ने हमको छला ॥

छले जाते हैं यद्यपि नित्य
किंतु हम करते हैं विश्वास ।
एक दिन आओगे तुम कृष्ण
दुष्ट-दल का करने को नाश ॥

अभी भी यहाँ बहुत से कंस
मचाते हैं नित अत्याचार ॥
नष्ट होता प्यारा गोवंश
बढ़ा जाता पृथ्वी का भार ॥

तुम्हारे स्वागत के हित बने—
हुए हैं अब भी कारागार ।
घटाएँ नभ में काली घिरीं
बरसतीं देखो मूसलधार ॥

अँधेरा छाया है यह घना
जन्म का प्रस्तुत है सामान ।
यही है कृष्ण, जन्म का समय
वचन पूरा कर दो भगवान ॥

पुरस्कार कैसा ?

सहसा हुई पुकार ! मातृ—
मंदिर में मुझे बुलाया क्यों ?
जान-बूझकर सोई थी, फिर
जननी ! मुझे जगाया क्यों ?

भूल रही थी स्वप्न देखना,
आमंत्रण पहुँचाया क्यों ?
करने जाती थी बंद द्वार,
सहसा पथ हाय ! सुझाया क्यों ?

मान मातृ-आदेश, दौड़कर
आने को लाचार हुई ।
क्या मेरी टूटी – फूटी – सी
सेवा है स्वीकार हुई ?

स्वयं उपेक्षित पर गुरुजन का
पथ – भूला दुलार कैसा ?
तिरस्कार के योग्य बावली,
पर यह अतुल प्यार कैसा ?

इस बुंदेलों की झाँसी में
शस्त्रों बिना तार कैसा ?
देश-प्रेम की मतवाली को
जननी ! पुरस्कार कैसा ?

क्षत्राणी हूँ सुख पाने दे
अरुणामृत की धारों से।
बनने दे इतिहास देश का
पानी चढ़े दुधारों से ॥

ज़रा सुलग जाने दे चारों—
दिशि कुरबानी की आगी ।
अरी बेतवा ! दिखा समर में
तेरे पानी की आगी !!

हर पत्थर पर लिखा जहाँ
बलिदान लक्ष्मीबाई का ।
कौन मूल्य है वहाँ सुभद्रा
की कविता - चतुराई का ?

न्यौता ? न्यौते का जवाब
मैं न्यौता देने आई हूँ ।
भाई ! दो, मैं तिलक-लालिमा
साथ न अपने लाई हूँ ॥

आज तुम्हारी लाली से
माँ के मस्तक पर हो लाली ।
काली जंजीरें टूटें, काली
जमना में हो लाली ॥

जो स्वतंत्र होने को हैं,
पावन दुलार उन हाथों का ;
स्वीकृत है, माँ की वेदी पर
पुरस्कार उन हाथों का ॥

लड़ने की धुन में भाई !
ममता का मधुर स्वाद कैसा ?
अपने ही से अपनों का,
डरती हूँ, धन्यवाद कैसा ?

परिशिष्ट १

(शब्दार्थ)

फूल के प्रति

गुमान = अभिमान, गर्व ।
सुमन = फूल ।
कुंज = लतागृह ।
संमान = आदर ।
मधुप = भौंरा ।
अपमान = निरादर ।
शूल = दर्द, कष्ट ।

मुरझाया फूल

स्वयं = अपने आप ।
बिखरनेवाली = टूट जानेवाली ।
गुज़रो = जाओ ।
संतप्त = तपा हुआ, दुखी ।

कलह-कारण

आराधना = पूजा ।
साधना = तपस्या ।
नेम = नियम ।
रिझाया = खुश किया ।
पधारे = आए ।
सहसा = एकाएक ।
संकोच = शर्म ।
प्रतीक्षा = इंतज़ार ।

चलते समय

ज़बान = जीभ ।
रूठती = नाराज़ होती ।
मान = अभिमान ।

भ्रम

अलौकिक = अद्भुत ।
संमोहन = मोह लेनेवाला ।
स्वरूप = शकल ।
अनूपम = जिसका बखान न किया जा सके ।

अटल = दृढ़ ।
आसक्त = मुग्ध ।
मनोमंदिर = मन रूपी मंदिर ।
अखिल = सारा ।
आनंद = खुशी ।
अपरंपार = बहुत ज्यादा ।
पूर्ति = आखीर, समाप्ति ।
मूर्ति = खिलौना ।

समर्पण

परिमल = सुगंध ।
पराग = पुष्प-रज ।
कुटिल = क्रूर ।
अतुल = बहुत ज्यादा ।
प्रणय = प्रेम ।
कल्पना = विचार, मनकी दौड़ ।
चिंत्य = सोचने लायक़ ।
जल्पना = बकवाद ।
वासनाएँ = इच्छाएँ ।
मृदु = कोमल, सुकुमार ।
गर्व = अभिमान ।
स्मृति = यादगार ।
स्वीकार = मंजूर ।

ठुकरा दो या प्यार करो

उपासक = पूजा करनेवाले ।
बहुमूल्य = दामी ।
मुक्तामणि = मोती और मणि ।
साहस = हिम्मत ।
नैवेद्य = भोग लगानेकी सामग्री ।
स्वर = आवाज़ ।
माधुर्य = मिठास ।
वाणी = बोली ।
चातुर्य = चतुराई ।
पुजापा = पूजा की सामग्री ।
उन्मत्त = पागल ।
अर्पित = चढ़ाया हुआ ।

स्मृतियाँ

गत = बीते हुए ।
तरल = पिघले हुए ।
मेघ = बादल ।
स्मृति नभ = यादगारी का आसमान ।
शेष = बाक़ी ।
निश्चित = नियत ।
मार्ग = रास्ता ।
क्षमा = माफ़ी ।
पद-रज = पैरों की धूल ।
अटल = न टलनेवाला ।
घड़ियाँ = वक्त, समय ।

विश्वास = इत्मीनान ।
भ्रांति = भूल ।
कसक = खटक ।
पथ-दर्शक = रास्ता दिखानेवाली ।
हर्षक = खुश करनेवाली ।
स्फूर्ति = फुर्ती ।
पूर्ति = पूरा करना ।
मूर्ति = तस्वीर, खिलौना ।
पाश = बंधन ।

जाने दो

कठिन = मुश्किल ।
प्रयत्नों = उपायों ।
सामग्री = चीज़ें ।
उमंगों = खुशियों ।
लगन = इच्छा, आकांक्षा ।
हर्ष = खुशी ।
उत्साह = फुर्ती ।
लज्जा = शर्म ।
संकोच = झिझक ।
उत्सुकता = चाह ।
संभ्रम = घबराहट ।
अंतरतम = हृदय, दिल ।
मानिनी = अभिमानिनी ।
साधना = तपस्या ।
परमानंद = बड़ी खुशी ।
पट = दरवाज़ा ।

शिशिर-समीरण

शिशिर-समीरण = जाड़े की हवा
धुन = मस्ती ।
इठलाना = ऐंठना ।
फिरती हुई = घूमती हुई ।
संयोग = मौक़ा ।
विरह-विकल = वियोग से व्याकुल ।
कारुण्य = दुःखपूर्ण ।
स्वयं = अपने आप ।
लालसा = अभिलाषा, इच्छा ।
तदवीर = उपाय ।
पीर = पीड़ा, दर्द ।
आघात = चोट ।

पारितोषिक का मूल्य

निश्छल = निष्कपट, छलहीन ।
सभक्ति = भक्ति के साथ ।
वस्त्राभूषण = कपड़ा और गहना
रुचि = इच्छा ।
प्रेमोन्मत्त = प्रेम में पागल ।
निज = अपना ।
जन-सेवा = दुनिया की भलाई

दीवानी = पागल ।
सुललित = संदर ।
प्रशंसा = तारीफ़ ।
विकसित = खिले हुए ।
नेत्र = आँख ।
संगीत = गाना ।
प्रतिध्वनि = गूँजना ।
पुरस्कार = इनाम ।
कोरा = केवल, सिर्फ़ ।
न्यूनता = कमी ।

बिंता

पथ = रास्ता ।
मचलना = अड़ जाना ।
कठिन = मुश्किल ।
मार्ग = रास्ता ।
मंजिलें = पड़ाव ।
तरंग = लहर ।
व्रत-भंग = प्रतिज्ञा तोड़ना ।
निकट = नज़दीक ।

प्रियतम से

परीक्षा = इम्तिहान ।
रूखा = कठोर ।
व्यवहार = बर्ताव ।

मानिनि राधे

आदर्श = लक्ष्य ।
साधे = साधना की ।
वृषभानु-किशोरी = वृषभानु की लड़की ।
भाव-गगन = कल्पना का आकाश ।
चकोरी = एक पक्षिणी जो टक-टकी लगाकर चंद्रमा को सारी रात देखा करती है
अलियाँ = सखियाँ ।
माधव = श्रीकृष्ण ।
मधुकर = भौंरा ।
गुंजें = गूँज ।
नख-शिख = सिर से पैर तक ।
भाता = अच्छा लगता ।
अविचल = न डिगनेवाली ।
सौभाग्य = अच्छी क़िस्मत ।
विलासी = लिप्त होना, डूब जाना ।
गुण-गण = तारीफ़ें ।
नयन = आँखें ।
मृदु = कोमल ।
न्योछावर = चढ़ाना, उत्सर्ग करना

तुच्छ = मामूली ।
लेखा = समझा ।
शीतल = ठंढा ।
आदर्श = दृष्टांत, कहानी ।
भाव = विचार, समझ ।

आहत की अभिलाषा

लेखा = समझा ।
प्रर्पण — सौंपना ।
इष्ट = अनुकूल ।
न्यारे = अलग ।
सुहृद = मित्र ।
घनेरा = बहुत ।
दूजा = दूसरा ।
विकल = व्याकुल ।
पटल = पट, तख्ता ।
साम्राज्य = अधिकार ।
सौम्य = सुंदर ।
अवसर = मौक़ा ।
निःस्वार्थ = स्वार्थ-रहित ।
चेरी = दासी ।
अधिकार = प्रभाव ।
ठौर = जगह ।
ध्येय = आकांक्षा, लक्ष्य ।
भावे = इच्छा हो ।

जल समाधि

कृतज्ञ = ऋणी ।
निर्दयता = निष्ठुरता ।
कातरता = बेबसी ।
गौरव = अभिमान ।
चितेरे = चित्रकार ।
निकट = पास ।
अनुसार = तरह ।
शिला = चट्टान ।
संतोष = तसल्ली ।
उत्कंठा = उत्सुकता ।
दृश्य = तमाशा ।
बलिष्ठ-तन = सुडौल शरीरवाला
क्रूर = कठोर ।
बेसुध = बेहोश ।
दीन = ग़रीब ।
प्रकाश = रोशनी ।
तरुणी = युवती, स्त्री ।
विरस = सूखी हुई ।
मंद = थोड़ी ।

मेरा नया बचपन

निर्भय = निडर ।
स्वच्छंद = बिना रुकावट के ।
अज्ञान = नासमझ ।

सुधा = अमृत ।
नेत्र-नीर = आँखों के आँसू ।
द्रुत = झट ।
साम्राज्य = बादशाहत ।
उमँग = उल्लास, खुशी ।
रँगरलियाँ = खेल-खिलवाड़, क्रीड़ा ।
आकांक्षा = अभिलाषा ।
पुरुषार्थ = पौरुष (धर्म, अर्थ काम, मोक्ष)
ज्ञान = बुद्धि ।
युद्धक्षेत्र = लड़ाई का मैदान ।
प्राकृत = असली ।
विश्रांति = आराम ।
संताप = दुःख ।
नंदन-वन = स्वर्ग की फुलवारी ।
दृगों = आँखों ।
कौतूहल = आश्चर्य ।
आह्लाद = खुशी ।
विजय-गर्व = जीत का अभिमान ।
मंजुल = मनोहर ।
नवजीवन = नई जिंदगी ।

बालिका का परिचय

शाही = राजसी ।
दीप-शिखा = दीपक की लौ ।
घनी-घटा = घने बादल ।
ऊषा = प्रातः सूर्य की किरणें ।
कमल-भृंग = कमल में बंद भौंरा ।
सुधाधार = अमृत की धारा ।
ज्योति = प्रकाश ।
नयन = आँख ।
मनस्वी = मन को वश में रखने-वाला ।
क्रीड़ापूर्ण = खेल-कूद से भरी हुई ।
वाटिका = फुलवारी ।
नाटिका = नाटक, दृश्य ।
जिनवर = जैनों में श्रेष्ठ, तीर्थंकर ।

इसका रोना

सुहाता = अच्छा लगता ।
छवि = शोभा ।
मुक्तावली = मोती की लड़ ।
दृष्टि = देखना, आँख ।
आत्मीय = अपनापन ।

बहुधा = अक्सर ।
चीख़ = चिल्लाहट ।
निर्भर = अवलंबित ।
क्रिया = काम ।

झाँसी की रानी

सिंहासन = राज्य ।
भृकुटी = भौंह ।
गुमी = खोई ।
आजादी = स्वतंत्रता ।
क़ीमत = मूल्य, दाम ।
बुंदेले = बुंदेलखंडवासी ।
हरबोलों = चारण, भाट ।
मर्दानी = मर्दों के समान, वीर ।
मुँहबोली = मुँह लगी, ढीठ ।
पुलकित = प्रसन्न ।
व्यूह = सेना सजाने का तरीक़ा ।
सैन्य = फ़ौज ।
आराध्य = पूजनीय ।
वैभव = धन, संपत्ति ।
सगाई = ब्याह ।
सुभट = वीर ।
विरुदावली = कीर्तिगाथा ।
चित्रा = अर्जुन की स्त्री ।
मुदित = प्रसन्न ।
कालगति = समय का संयोग ।
विधि = विधाता, ब्रह्मा ।
डलहौज़ी = भारतवर्ष का तत्कालीन गवर्नर ।
लावारिस = जिसका कोई उत्तराधिकारी न हो ।
बिरानी = दूसरे की ।
अनुनय-विनय = प्रार्थना ।
विकट = भयानक ।
माया = चाल ।
ग़म = चिंता ।
बेज़ार = व्याकुल ।
सरेआम = खुले तौर से ।
जेवर = गहने ।
विषम = अत्यंत मार्मिक ।
आहत = ठुकराया हुआ, घायल ।
अपमान = बेइज्जती ।
आह्वान = बुलावा ।
उकसानी = उठ खड़ी हुई ।
जुर्म = अपराध ।
क़ुरबानी = बलिदान ।
लेफ्टिनेंट वौकर = अँग्रेजी सेना का एक सेनाध्यक्ष ।
द्वंद्व = लड़ाई ।

असमान = जो बराबरीके न हों।
निरंतर = बराबर।
जनरल स्मिथ=अँग्रेजी सेना का एक सेनापति।
ह्यु रोज़ = अँग्रेजी सेना का एक सेनापति।
संकट = विपत्ति।
वीरगति = मृत्यु।
दिव्य = अलौकिक, संदर।
तेज = शक्ति, ज्योति।
मनुज = मनुष्य।
अविनाशी = जिसका नाश न हो सके।
मदमाती = अभिमान से भरी।
स्मारक = यादगार।
अमिट = न मिटनेवाली।
तड़ित् = बिजली।
घन = बादल।
घटा = समूह।
गगन = आसमान।
पुष्प = फूल।
सुहाई = सुंदर लगनेवाली।
पूनो = पूर्णिमा।
बंधु = भाई।
जालिम = अत्याचारी।
तपता = तपस्या करता।
जौहर = राजपूत स्त्रियों का व्रत-विशेष; जब कभी राजपूत लड़ाइयों में (मुसलमानी शासनकाल में) दुश्मनों से हार जाते और रक्षा का कोई उपाय न रह जाता, तो राजपूत-स्त्रियाँ आग जलाकर उसमें जल जाती थीं, इसी को जौहर व्रत कहते हैं।
कसाला = कष्ट।
प्रण = प्रतिज्ञा, निश्चय।
चुनौती = ललकार।

मेरी कविता

तत्काल = उसी समय।
जालियाँवाला=पंजाब का प्रसिद्ध शहीदी बाग़, जहाँ जनरल डायर ने निहत्थी जनता पर गोलियाँ चलाई थीं।
फ़ायर = गोली चलाना।
यथा = जैसा।

मग्न = डूबा हुआ।
केशपाश = बालों का समूह।
शून्य दृष्टि = सूनी आँखें।
खिन्नमना = उदास।
भाल = ललाट।
क्लेश = दुःख।
रम्य = सुंदर, रमणीय।
क्रम-क्रम = धीरे-धीरे।

राखी

नूतन = नया।
भुजदंड = हाथ।
आख्यान = कहानी।
राखी-बंद = राखी से बँधा हुआ।
निस्तेज = बेदम, मुर्दा।
साखी = साक्षी, गवाह।
जलियाँ का गोलंदाज़ = मशहूर गोली चलानेवाला डायर।
अंकित = लिखा हुआ।
मार्शल-ला = फ़ौजी क़ानून।

विजयादशमी

धर्मभीरु = धर्म से डरनेवाला।
सात्विक = शुद्ध।
निश्छल = छल रहित।
करुणा का धाम = दूसरे के दुख से दुखी होनेवाला।
असहाय = जिसकी सहायता करनेवाला कोई न हो।
विधाता = ब्रह्मा, ईश्वर।
वाम = बाँया, विरुद्ध।
सहचरी = पत्नी।
सम्राट = बादशाह।
ठटे = सजे।
रक्षक = रक्षा करनेवाला।
राक्षस-सैन्य = राक्षसों की सेना।
सबल = बलवान।
प्रहरी = पहरेदार।
सिंधु = समुद्र।
विराट = बड़ा भारी।
नर = मनुष्य।
देव = देवता।
फ़कीरी = भिखारियों का-सा।
अतिशय = अत्यंत, बहुत।
संतोष = सब्र।
रोष = गुस्सा, क्रोध।
कोष = खज़ाना।
प्रचार = ललकार।
यम = काल।

रण = लड़ाई ।
त्राण = रक्षा, उद्धार ।
अनोखा = अजीब ।
दल दें = नष्ट कर दें ।
भीरु = कायर ।
अबलाएँ = स्त्रियाँ ।
घमसान = भयानक ।
ब्रह्मांड = संसार ।
छार = नष्ट !
जगतीतल = संसार ।
आत्मिक बल = आत्म शक्ति, अंदरूनी ताक़त ।
संग्राम = लड़ाई ।
याम = पहर ।

मातृ-मंदिर में

नेत्र = आँख ।
ध्यान = याद ।
उत्सव = जलसा ।
कालिंदी = यमुना ।
समारोह = धूमधाम ।
वस्त्राभूषण = गहना कपड़ा ।
मनुहार = आदर ।
मोदमय = खुशी से भरी ।
झिझकाना = रोक देना ।
प्रेमोन्मत्ता = प्रेम में पागल ।
महानता = बड़प्पन ।
भव्य = अलौकिक, सुंदर ।
संतान = बच्चा ।
महान = बड़ा ।
सिरताज = सिरमौर ।
स्वातंत्र्य - प्रभात = आज़ादी का सबेरा ।
जगती = दुनिया ।
पद-वंदन = पैरों की पूजा ।
अभिनंदन = सलामी, स्वागत ।
पार्लमेंट = क़ानून बनानेवाली सभा ।
क्षेत्र = खेत, मैदान ।

मातृ-मंदिर में

व्यथित = दुखी ।
पद-पंकज = पैर रूपी कमल ।
मातृ मंदिर = माता का मंदिर ।
दीन = ग़रीब ।
अज्ञान = मूर्ख ।
दुर्गम = न जाने योग्य ।
मार्ग = रास्ता ।
सोपान = सीढ़ी ।
वाद्य = बाजा ।

कलगान = संदर गीत।
फ़रयाद = विनती, प्रार्थना।

मातृ मंदिर में

शुक्लता = सफेदी।
तर्जन = लड़ाई–झगड़ा।
आदित्य = सूरज।
कंज = कमल।
भू = भूमि।
साध्वी = सच्चरित्रता, शुद्ध, पवित्र।

झंडे की इज्ज़त में

इच्छुका = अभिलाषिणी।
क़ौमी = राष्ट्रीय।
शीश = सिर।

मेरी टेक

आन = टेक।
अंधेर = अन्याय।

बिदाई

पधारो = जाओ।
शुभचिंतक = भला चाहनेवाला।

विदा

रौरव = नारकीय।
गौरव = आदर।
स्पष्ट = साफ़।
पावन = पवित्र।
प्रफुल्ल = प्रसन्न।
मुद्रा = चेष्टा, आकार।

स्वागत

उत्सुक = उत्कंठित।
अर्घ्य = अंजलि।
दिवसेश = सूर्य।
वन-श्री = वनकी शोभा।
हिंसा = मारकाट।
नरनाह = अन्याय।
मर्यादा = सीमा।
चिरजीवी = बहुत दिनों तक जीनेवाली।
सात्विक = पवित्र।
उद्यान = बगीचा।
त्रुटियों = ग़लतियों।

स्वागत-गीत

भविष्य = आनेवाला समय।
मर्म = अभिप्राय, मतलब।
मुराद = इच्छाएँ।
आबाद होना = बसना।
मादरेहिंद = भारतमाता।
आज़ाद = स्वाधीनता।
त्राता = छुड़ानेवाले।

नियोग = प्रयोग ।
रार = लड़ाई ।

स्वदेश के प्रति

प्रमुदित = प्रसन्न ।
गुरुता = बड़प्पन ।
अनुगामी = पीछे चलनेवाला ।
कीर्ति-ध्वजा = यश की पताका
स्वामी = मालिक ।
कृतियाँ = करतूत ।

मत जाओ !

असहाय = निरवलंब ।
असमय = बुरा वक्त ।
मंडाला = जेल, जहाँ भगवान तिलक ने तपस्या की थी ।
प्रमुख = मुख्य, प्रधान ।
अमरपुरी = स्वर्ग ।

विस्मृत की स्मृति

वैतरणी = स्वर्ग की एक नदी ।
रटें = याद करें ।
गोवर्धन = गोकुल का एक पर्वत ।
सतृष्ण = तरसते हुए ।
अनयो = अन्याया ।
कारागार = जेल ।
घटाएँ = बादल ।
प्रस्तुत = तैयार ।

पुरस्कार कैसा ?

सहसा = एकाएक ।
जननी = माता ।
आमंत्रण = बुलाहट, न्योता ।
पथ = रास्ता ।
मातृ-आदेश = माता की आज्ञा
उपेक्षित = तिरस्कृत ।
गुरुजन = बड़े लोग ।
बावली = पगली ।
अतुल = जिसकी तुलना न की जा सके ।
पानी चढ़े = तीखी धारवाली ।
दुधारों = तलवारों ।
कुरबानी = बलिदान ।
बेतवा = झाँसी में बहनेवाली एक नदी ।
समर = लड़ाई ।
पावन = पवित्र ।

परिशिष्ट २

(आलोचना)

लेखक—पं० गणेश प्रसाद द्विवेदी एम० ए०,

कविता क्या है ?

संसार में कुछ ऐसे विषय हैं, जिनका रसास्वादन मात्र ही संभव है; उनका वर्णन, उनकी व्याख्या या उनकी परिभाषा नहीं। कविता भी ऐसे ही विषयों में से एक है। विश्व में जब से काव्य और कवि-चर्चा का चलन आरंभ हुआ है, तब से आज तक जितने प्रमुख साहित्य-गवेषणा करनेवाले चिंतनशील विद्वान हुए हैं, प्रायः सबों ने अपने-अपने विचार से कवि, काव्य, कविता, तथा इसके विविध अंगोंपांगों की न्यूनाधिक पार्थक्य के साथ भिन्न-भिन्न परिभाषाएँ की हैं। भारतवर्ष में ही संस्कृत काव्य के प्रायः जितने मुख्य आचार्य हुए हैं, सबों ने काव्य, रस, तथा उनके भावों-विभावों आदि की इतनी सूक्ष्म परिभाषाएं की हैं तथा इनके इतने अवांतर भेद दिखलाए हैं, कि 'अलंकारशास्त्र' नाम से इस संबंध का एक स्वतंत्र तथा विशद शास्त्र ही तैयार हो गया है और इसके सम्यक्

अध्ययन के लिए एक अच्छे संस्कृतज्ञ को भी सालों सर खपाना पड़ता है ! पर ये आचार्य कविता के बाह्य रूप की ओर ही अधिक गहरे गए। उपमा आदि अलंकार, वैदर्भी आदि रीति, माधुरी आदि गुण, शृंगारादि रस, तथा स्थायी-व्यभिचारी आदि इनके भावों और विभावों का ही निरूपण विशेष रूप से किया गया। यों तो इन आचार्यों के कई स्कूल हैं, पर उनमें मुख्य हैं दो—रीतिवादी और ध्वनिवादी। दंडी आदि अगले आचार्यों ने रीति और गुण को प्राधान्य दिया। फिर प्रधान आचार्य मम्मट ने रस और ध्वनि को काव्य की जान बतलाया, पर साथ ही अपनी काव्य की परिभाषा में कविता के 'शब्द और अर्थ' दोनों ही का अदोष होना अनिवार्य बतलाया, और यह भी साफ़ कह दिया कि कविता के लिए 'अलंकृत' होना आवश्यक नहीं है*। पर आगे चलकर आचार्य विश्वनाथ ने काव्य की परिभाषा बहुत सरल और कदाचित् 'वैज्ञानिक' भी कर दी। इन्होंने सीधे यह कह दिया कि रसात्मक वाक्य ही काव्य है‡। इनके अनुसार रस ही काव्य का एकमात्र प्राण है। 'रस' को यदि रति आदि आठ या नौ मानसिक अवस्थाओं तक ही सीमित न मानें तो यह परि-

---

*'तददोषौशब्दार्थावनलंकृती क्वापि'—मम्मट।

‡'वाक्यं रसात्मकं काव्यं'—विश्वनाथ।

भाषा कदाचित् सबकालीन कविता के लिए भी अनुपयुक्त न होगी। रस को हमारे आचार्यों ने एक प्रकार का 'लोकोत्तर,' 'अनिर्वचनीय,' 'ब्रह्मानंद सहोदर' आनंद कहा है, जो काव्य के पढ़ने, सुनने या देखने से संभव हो।

वर्तमान युग में कवि की हृदयस्थ भावना, अनुभूति या वेदना आदि को विशेष महत्व दिया जा रहा है। रस, गुण, शब्दालंकार अर्थालंकार, यहाँ तक कि छंद तक का होना भी अब कविता के लिए आवश्यक नहीं समझा जाता। कविता के विकास पर यदि हम एक दृष्टि डालें तो यह स्पष्ट हो जायगा कि ज्यों ज्यों मानव समाजकी विचारधारा आगे बढ़ती गई है, त्यों त्यों कविता-कामिनी के कलेवर से उसके वाह्य आभूषण, परिधान, उसकी बाहरी सजधज या आडंबर आदि का महत्व घटता गया और रसिकों को इनसे अरुचि होती गई है। लोग अब इस निष्कर्ष पर पहुँच गए हैं कि सचमुच सुंदर कविता की शोभा इन आभूषणों की अपेक्षा नहीं करती और आधुनिक सुसंस्कृत काव्य-रसिक की दृष्टि में आभूषणों या अन्य वाह्याडंबरों से वेष्टित कविता भद्दी ही लगती है। बात बहुत कुछ ठीक भी है। अब अलंकारों का क्या, छंदों का ज़माना भी गया! लोगों का कहना है कि छंद के चक्कर में पड़कर कवि की स्वतंत्र भावना में बाधा पड़ती है। काव्य-रचना संबंधी किसी भी प्रकार के नियम की

पाबंदी में यदि कवि का ध्यान बटा तो बहुत संभव है कि अपने हृदय के अंतस्तल से निकलनेवाली झंकार को उसे बहुत कुछ बेसुरी करने पर बाध्य होना पड़े। इसी से आधुनिक कवि कविता देवी की उपासना में अपने को सब प्रकार के बंधनों से 'मुक्त' रखने में ही सुविधा समझता है। अभी भी अनुप्रासों की बहार के प्रेमी व्यंग, चमत्कार आदि के क़ायल, छंदों की छटा के शौक़ीन, अन्योक्ति वक्रोक्ति आदि के अनुरागी प्रायः मिलते हैं, पर इनकी संख्या दिन पर दिन गिरती ही जा रही है। अभी थोड़े ही दिन हुए, [illegible] के अनन्य पुजारी स्वर्गीय बाबू जगन्नाथ दास जी 'रत्नाकर' ने इन पंक्तियों के लेखक से एक बड़े मार्के की बात कही थी। आप छंद और तुक को कविता के लिए अनिवार्य समझते थे और प्रसंगवश, बात चल पड़ने पर आपने बड़े आवेश से कहा कि और तो जाने दीजिए, मोर या कोयल भी एक ख़ास छंद और तुक के अनुसार गाती है! कोयल का 'कुहू', 'कुहू' शब्द भी ध्वनि और ताल के एक नियमित समन्वय के अनुसार ही होता है! बात सच है, अन्य विचार-धारा के बंधन में पड़ने से भावों को भद्दा करना या तोड़ना-मरोड़ना पड़ता है। इनके अनुसार वह कवि ही कैसा, जो हृदयस्थ कोमल से कोमल और सूक्ष्म से सूक्ष्म भाव को उचित छंद के चौखटे में ठीक ठीक 'फ़िट' न कर सके।

नहीं तो साधारण कथन और कविता में फ़र्क़ ही क्या रह गया ? यों तो सभी किसी न किसी तरह अपने आवेगों और उच्छ्वासों को दूसरों पर व्यक्त कर लेते हैं।

इसमें संदेह नहीं कि उक्त दोनों मतों में ही सत्य है। पर इस समय अधिकतर आधुनिक कवि और विद्वान् छंद आदि की निस्सरिता में ही अधिक विश्वास करते हैं। यहाँ यह भी कह देना आवश्यक है कि यद्यपि येलोग काव्य रचनाके लिए किसीभी बंधन के रहनेके विरोधी हैं, तौ भी कविता में संगीत, कोमलता, प्रसाद और यथास्थान ओज आदि गुणों का होना आवश्यक बताते हैं।

पाश्चात्य साहित्य के प्रभाव से भी कविता की भावना में एक विशेष परिवर्तन हो गया है। कविता अब एक प्रधान ललित कला मानी जाती है, और कला वही है जो 'सत्य' और 'सुंदर' का दिग्दर्शन करावे। यह दोनों ही शब्द बड़े बेढब हैं। जब हम कला और कविता आदि क्या हैं, यही ठीक ठीक नहीं बतला पाते तो 'सत्य' और 'सुंदर' क्या है, यह कहना तो बहुत दूर की बात है। मेरे विचार में तो विद्वान लोग व्यर्थ ही इन बातों की परिभाषा में इतनी मग़ज़पच्ची करते हैं। अब अधिकतर यही कहा जा रहा है कि वास्तव में 'सुंदर' वही हो सकता है जो 'सत्य' हो! दूसरे शब्दों में, कम से कम जहाँ तक कला का संबंध है, 'सत्य' और 'सुंदर' पर्यायवाची शब्द हैं।

यह तो हुआ पाश्चात्यों का मत। हमारे यहाँ के आधुनिक समालोचकों की ज़बान पर भी कला के संबंध में ज़िक्र छेड़ते ही यही दोनों शब्द रह-रहकर आते रहते हैं, पर पाश्चात्यों की अपेक्षा थोड़ी-सी विशेषता के साथ। ये लोग इन दोनों शब्दों के साथ एक शब्द और लगाते हैं— शिव। यों तो शिव शब्द एक देवता विशेष के नाम के रूप में हिंदू जाति के लिए एक बड़ा पुराना और सुपरिचित शब्द है, पर कुछ समय से वह कला के एक लक्षण, गुण, या सिफ़त के रूप में प्रयुक्त होने लगा है। 'शिव' शब्द का अर्थ होता है कल्याण करनेवाला, और तदनुसार सुंदर और सच्ची कला वही है, जिससे लोक का कल्याण हो। यों तो वाङ्मय के संबंध में या शब्द-ब्रह्म के संबंध में 'सत्यं शिवं सुंदरम्' हमारे शास्त्रकारों की एक बड़ी प्राचीन उक्ति है, पर जहाँ तक मैं समझता हूँ, बहुत संभव है कि मैं ग़लत समझता होऊँ, कि तीनों शब्द कला की कसौटी के रूप में पाश्चात्य समालोचकों को देखा-देखी ही हमारे यहाँ के समालोचक व्यवहृत करने लगे हैं। जो हो, पर केवल 'सत्यं शिवं सुंदरम्' कह देने से ही 'कविता क्या है' यह प्रश्न हल नहीं होता। यदि एक वाक्य में कविता क्या है यह बतलाना संभव है तो वह वाक्य मेरे निर्णय के अनुसार कुछ-कुछ इस आशय का होना चाहिए "कविता हृदय-स्थित किसी रागात्मक भाव या उमंग का शब्दों द्वारा व्यक्तीकरण

मात्र है।" अब इसके साथ हम चाहें तो, कविता को कसौटी के रूप में, सत्य-सौंदर्य आदि कुछ विशेषण और जोड़ सकते हैं, पर यह विशेषण दो श्रेणियों में विभक्त किए जायँगे। उपर्युक्त वाक्य से स्पष्ट है कि कविता के लिए कवि में दो बातें होनी चाहिएँ, एक तो हृदय में रागात्मक भाव और दूसरा उसके व्यक्तीकरण की सामर्थ्य। हृदय में किसी रागात्मक भाव का होना या आना ही कविता की जड़ है। उत्कृष्ट कविता के लिए वह भाव कैसा या किस निमित्त होना चाहिए? सत्य और सौंदर्य के निमित्त। सत्य के लिए इसलिए कि बिना सत्य के उसका प्रभाव (कवि और पाठक दोनों ही के हृदय पर) या तो पड़ेगा ही नहीं, और पड़ेगा भी तो वह झूठा या दूषित होगा। और, यदि उसमें 'सत्य' है, तो वह 'शिव' होगा ही; इसलिए 'शिव' को अलग से कहने की हम आवश्यकता नहीं समझते। फिर वह भाव सौंदर्य के लिए होना चाहिए, क्योंकि कविता का काम है लोकोत्तर आनंद के द्वारा मन, बुद्धि, हृदय या आत्मा को ऊँचा उठाना, साथ ही उसे संस्कृत और परिमार्जित करना। सौंदर्य और कुछ नहीं, आनंद का सब से प्यारा रूप मात्र है। इसी कथन में हम विश्वनाथ की 'वाक्यं रसात्मकं काव्यं' वाली परिभाषा की भी सार्थकता देखते हैं, क्योंकि कविता में रसास्वादन और कुछ भी नहीं, सौंदर्य का आनंदानुभव ही है। यदि हम आचार्यों द्वारा निरूपित कविता के सब रसों और उसके स्थायी

तथा संचारी भावों को समष्टि रूप से देखें तो यह स्पष्ट हो जाता है कि सब के स्कूल में केवल एक तत्व है—सौंदर्य।

दूसरे विशेषण कवि के भावों या उमंगों के व्यक्तीकरण के संबंध में प्रयुक्त होते हैं। जितनी बातें कविता के बाह्यरूप या 'फ़ार्म' से संबंध रखती हैं, उन सबको हम इस श्रेणी में रख सकते हैं। माधुर्य, प्रसाद, ओज, संगीत, उक्ति वैचित्र्य, चमत्कार, अनुप्रासादि शब्दालंकार तथा उपमादि अर्थालंकार, तुक या बेतुक आदि जितनी बातें हैं, वह सब इसी श्रेणी में आएँगी। यदि हम विचार करें तो इन सबों के मूल में क्या देखते हैं? इतने गुणों की आवश्यकता क्यों बताई गई है? भाव के व्यक्तीकरण में कौन सी ऐसी अभीप्सित वस्तु है, कौन सा ऐसा लक्ष्य है, जिसके लिए इन तमाम उपायों से कवि-समुदाय सहायता लेता आया है? एक शब्द में हम कहेंगे—शक्ति। कविवचन में एक ऐसा बल या हिलोर होनी चाहिए, जिससे पाठक के हृदय पर कवि के भावों की गहरी चोट लग सके, उनका पूरा असर हो, कवि जिस उमंग या हिलोर से व्याप्त हो गया है, पाठक भी उससे एक बार झूम जाय। कविता में फ़ार्म का मक़सद बस यहीं तक है, मगर यह बहुत बड़ा मक़सद है। कवि की सफलता या असफलता का रहस्य इसी में है। बहुत से कवि अपने भावावेश में स्वयं तो विभोर हो जाते हैं, मतवाले हो जाते हैं, पर पाठक को इसी रंग में नहीं रँग पाते; इसका कारण यह है कि

उनकी वाणी में शक्ति नहीं है। इसी लिए आचार्य राजशेखर ने कवि के लिए तीन अनिवार्य गुण बतलाए हैं—प्रतिभा, शिक्षा और अभ्यास। हम व्यक्तिगत रूप से पूर्णतः इस कथन से सहमत हैं। केवल प्रतिभा या भावावेश में विभोर हो जाने से ही कोई पूर्ण कवि नहीं हो सकता। उसमें यह शक्ति होनी चाहिए कि अपने भावोन्माद में पाठक को भी आकुल कर सके। यदि वह ऐसा नहीं कर सकता तो वह अधूरा है। और यह शक्ति, शिक्षा और अभ्यास से ही संभव है।

लोग अक्सर कहते हैं, कवि पैदा होता है। जहाँ तक प्रतिभा और भावोन्माद में विह्वल होने की सामर्थ्य का संबंध है, कवि पैदा ही होता है। पर केवल प्रतिभा के बल से कोई कवि आज तक सफल होता नहीं देखा गया। इस प्रकार के उदाहरणों की कमी नहीं है।

प्राचीन समय में, जब अधिकतर साहित्य-निर्माण कविता में ही होता था, कवि के लिए अलंकार शास्त्र, छंद, पिंगल, व्याकरण आदि शास्त्रों का सम्यक् अध्ययन अनिवार्य था। चंद वरदाई की अमर कृति पृथ्वीराज रासो में हम इस बात का उल्लेख पाते हैं कि 'कवीश्वर' की पदवी उसी को मिलती थी, जो षड्-भाषा-विशारद और अलंकार आदि शास्त्रों का ज्ञाता होता था। अस्तु,

हमारे इस कथन से कोई यह न समझ ले, हम कवि केवल उसी को मानते हैं जिसने उक्त प्रकार की शिक्षा और अभ्यास में

बहुत-सा समय बिताया हो। यह हम निस्संकोच कह सकते हैं कि प्रतिभा की ही भाँति कुछ भाग्यशाली लोगों में यह शक्ति भी नैसर्गिक होती है। अपने भावों से पाठक को पूर्ण रीति से प्रभावित करने के लिए कुछ लोगों को शिक्षा और अभ्यास की भी आवश्यकता नहीं पड़ती। उदाहरण के लिए जगत्प्रसिद्ध शेक्सपियर और मिल्टन को ही लीजिए, दोनों अमर कवि हुए हैं। पर शेक्सपियर को शिक्षा और अभ्यास में समय देने की आवश्यकता नहीं पड़ी थी और मिल्टन प्रकांड पंडित था, रात-रात-भर पढ़ते-पढ़ते ही अंधा हो गया था! हमारे ही यहाँ कबीर निरक्षर थे और तुलसी महान् पंडित। दोनों ही अमर हैं। महाकवि सूर और मीरा कितनी गहरी चोट करते हैं!

हाँ, इतना मैं अवश्य कहूँगा कि जिसमें प्रतिभा और व्यक्तीकरण की शक्ति दोनों स्वाभाविक रीति से विद्यमान हों और वह भाग्यशाली पुरुष (अथवा स्त्री) यदि कुछ समय शिक्षा और अभ्यास में भी लगावे तो फिर क्या कहना! इस संबंध का मैं एकही उदाहरण दूँगा—महाकवि तुलसी! तुलसीदास की जन्मजात प्रतिभा के साथ मिलकर उनके अध्ययन और अभ्यास ने उन्हें कितना लोकप्रिय और महान् कवि बना दिया है, यह किसी से अविदित नहीं है।

सुभद्राजी की कविता

इस छोटी सी आलोचना में कविता के संबंध में अधिक विचार करने का स्थान नहीं है। अब ज़रा उल्लिखित बातों के आधार पर श्रीमती सुभद्राजी की कविताओं पर विचार करना चाहिए सब से पहले ही मैं यह कह देना चाहता हूँ कि आप के हृदय में उमंग, कसक, वेदना या पीर की उठान में विह्वल हो जाने और उसे व्यक्त करने दोनों ही शक्तियों का न्यूनाधिक परिचय कुछ पद्यों में हमको मिलता है, पर आपकी विशेषता है भावुकता, सच्ची अनुभूति। आप के हृदय में भावों की छाप बहुत स्पष्ट पड़ती है और उनके आवेगों में विह्वल होने की शक्ति भी आप में है। आप जिस सहज सुंदर भाव से अपने भावों को पाठक के सम्मुख रख देती हैं, उससे पाठक क्या समालोचक को भी हठात् ऐसा जान पड़ता है, मानों समस्त हृदय ज्यों-का-त्यों निकालकर सामने रख दिया गया है। उदाहरणार्थ निम्नलिखित पंक्तियों में कितना पूर्ण चित्र हमारे सामने रक्खा गया है :—

उन्हें सहसा निहारा सामने, संकोच हो आया।
मुँदीं आँखें सहज ही लाज से नीचे झुकी थी मैं॥
कहूँ क्या प्राणधन से यह हृदय में सोच हो आया।
वही कुछ बोल दें पहले, प्रतीक्षा में रुकी थी मैं॥

अचानक ध्यान पूजा का हुआ, झट आँख जो खोली।
नहीं देखा उन्हें बस सामने सूनी कुटी देखी॥
हृदयधन चल दिए, मैं लाज से उन से नहीं बोली।
गया सर्वस्व, अपने आप को लूनी लुटी देखी॥

सुभद्राजी की भावुकता

इन पंक्तियों में न तो कल्पना की कोई ऊँची उड़ान है, न कोई चमत्कार या अलंकार ही है और न और ही किसी प्रकार का आडंबर या सजावट है, पर तौ भी हृदय पर कितना मीठा असर होता है! कारण क्या? कवि के हृदय में सच्ची अनुभूति की छाप पड़ी है और उसका मानों 'वर्बेटिम रिप्रिंट', ज्यों की त्यों प्रतिलिपि, हमारे सामने रख दी गई है। अतिशयोक्ति न हो तो मैं कहूँगा, ठीक यही बात मीरा में थी। वह अपने नँदलाल के बारे में जो कुछ अनुभव किया करती थी, वही ज्यों का त्यों गाया करती थी। न शब्दाडंबर, न चमक और अनुप्रासों की बहार, न और कोई चमत्कार या उक्तिवैचित्र्य, न और ही कोई जादूगरी, पर पाठक-हृदय बरबस एक अलौकिक आनंद की तरंगों में उद्वेलित हो उठता है। कारण क्या? भावावेश, भावोन्माद या भावुकता, जो कहिए। सुभद्राजी की कविताओं में यह विशेषता हम प्रायः देखते हैं। हाँ, एक बात की कमी जरा खटकती है। मीरा

संगीत और नृत्य कला में प्रवीण थी और एक सच्चे कवि का हृदय तो उसे स्वभाव से ही प्राप्त था। शायद इसी से उसके पदों में, जो प्रायः सभी गेय हैं, संगीत की ध्वनि और नृत्य की गति-शीलता और उस मादक चपलता का जो कि साक्षात् जीवन को ही द्योतक है परिचय हमें पद-पद पर मिलता है। मैं स्वयं संगीत का विद्यार्थी हूँ, इससे शायद मुझ पर वे खास तौर से चोट करते हों। जो हो, पर इससे कोई यह न समझे कि मैं यहाँ मीरा और सुभद्रा की तुलना करने बैठ गया। दोनों में हम एक समान गुण देखते हैं—अपने भावोन्माद में अपने को व्याप्त कर लेना और फिर उसे ज्यों का त्यों व्यक्त कर देने या तसवीर-सी खींच देने की सामर्थ्य रखना।

विचार गांभीर्य

भावुकता के साथ ही सुभद्राजी की पंक्तियों में प्रायः विचार-गांभीर्य की मात्रा भी उचित परिमाण में पाई जाती है। यहाँ विचार से हमारा मतलब तत्वज्ञान अथवा दर्शन संबंधी विचारों से नहीं है। तात्पर्य केवल इतना ही है कि आपकी भावना प्रायः बहुत गहरी जाती है। एक उदाहरण से मेरा आशय स्पष्ट हो जायगा। 'भ्रम' शीर्षक कविता में आप लिखती हैं:—

देवता थे वे, हुए दर्शन, अलौकिक रूप था।
❀ ❀ ❀
हो गई उस रूप-लीला पर अटल आसक्त मैं॥

देर क्या थी ? यह मनोमंदिर यहाँ तैयार था।
वे पधारे, यह अखिल जीवन बना त्योहार था ॥
झाँकियों की धूम थी, जगमग हुआ संसार था।
सो गई सुख नींद में, आनंद अपरंपार था ॥
किंतु उठकर देखती हूँ, अंत है जो पूर्ति थी।
मैं जिसे समझे हुए थी देवता, वह मूर्ति थी ॥

यहाँ मैं अंतिम दो लाइनों की ओर ख़ास तौर से ध्यान आकर्षित करता हूँ। इसे पढ़ते ही मुझे असगर हुसेन गोंडवी का एक शैर याद आया। शैर यों है :—

सौ बार तेरा दामन हाथों में मेरे आया।
जब आँख खुली देखा अपना ही गरेबाँ है ॥"

सुभद्राजी की इन पंक्तियों में तन्मयता है, मादकता है, ज्ञान है और है निराशा। निराशा ही ज्ञान की जननी है। इनका आनन्द गूँगे के गुड़ की ही भाँति है। इनके भाव को मन ही मन समझते और आनंद में मग्न होते जाइए, कुछ कहकर बतानेवाली चीज़ नहीं है यह।

अनुभूति

कहीं कहीं स्वानुभूति का बड़ा सुंदर चित्र सुभद्राजी खींचती हैं। आपकी एक कविता है "मेरा नया बचपन"। इसमें आपने शैशव और यौवन का जितना सुंदर और पूर्ण चित्र खींचा है, वह

एक सहृदय और भावुक मातृ-हृदय के लिए ही संभव है। कविता के प्रारंभ में आपने अपने बाल्य जीवन का बड़ा सजीव वर्णन किया है। कुछ दिनों बाद बचपन सपने-सा खो जाता है। अब प्रथम यौवन का जितना जीता-जागता और स्वाभाविक चित्र सुभद्राजी ने खींचा है, वह उन्हीं के शब्दों में सुनिए :—

वह सुख का साम्राज्य छोड़कर
मैं मतवाली बड़ी हुई।
लुटी हुई, कुछ ठगी हुई-सी
दौड़ द्वार पर खड़ी हुई॥
लाज-भरी आँखें थीं मेरी
मन में उमँग रँगीली थी।
तान रसीली थी कानों में
चंचल छैल-छबीली थी॥
दिल में एक चुभन-सी थी
यह दुनिया सब अलबेली थी।
मन में एक पहेली थी, मैं
सब के बीच अकेली थी॥

सब के बीच अकेली होना, इस पद्य का प्राण है। शैशव के बाद, प्रथम यौवन के समागम में, सारा संसार एक नवीन विभूति से भर उठा—वह विभूति कवयित्री के लिए एक पहेली थी। सब

कुछ होते हुए भी उसे एक अभाव का अनुभव होता था, सब के बीच वह अपने को अकेली पाती थी। अपनी इस अनुभूति को कितने सुंदर, कितने सरल ढंग से उसने व्यक्त किया है, वह प्रत्येक सहृदय पाठक स्वतः ही समझ सकेगा। किंतु हृदय का यह सूनापन अधिक समय तक नहीं रहता। कवयित्री आगे चलकर कहती है :—

सब गलियाँ इसको भी देखीं,
इसकी खुशियाँ न्यारी हैं।
प्यारी, प्रीतम की रँग-रलियों
की स्मृतियाँ भी प्यारी हैं॥
माना मैंने युवाकाल का
जीवन खूब निराला है।
आकांक्षा, पुरुषार्थ, ज्ञान का
उदय मोहने वाला है॥
किंतु यहाँ झंझट है भारी
युद्धक्षेत्र संसार बना।
चिंता के चक्कर में पड़कर
जीवन भी है भार बना॥

इस भार-भूत जीवन से ऊबकर कवयित्री कहती है —

मैं बचपन को बुला रही थी

बोल उठी बिटिया मेरी।
नंदन – बन – सी फूल उठी
यह छोटी –सी कुटिया मेरी॥

अपनी बिटिया को वह अपना नया बचपन मानती हैं और—

मैं भी उसके साथ खेलती—
खाती हूँ, तुतलाती हूँ।
मिलकर उसके साथ स्वयं
मैं भी बच्ची बन जाती हूँ॥

उल्लिखित पंक्तियों में शैशव और यौवन का कितना सुंदर, पूर्ण, स्वाभाविक और सजीव चित्र रक्खा हुआ है! अपनी अतीत अनुभूतियों और मनस्थितियों को संदर काव्य का रूप दे देना हँसी-खेल नहीं है। बहुत थोड़े लोग ही इसमें सफल होते हैं और सुभद्राजी ऐसे लोगों में एक हैं।

'झाँसी की रानी' आपको 'मास्टरपीस' समझी जाती है। यह कविता बहुत लोकप्रिय हुई और झाँसी की रानी का जिक्र छिड़ते ही प्रायः सभी लोगों के मुँह से अनायास ही ये पंक्तियाँ निकल पड़ती हैं—

"बुंदेले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसीवाली रानी थी॥"

ये दो लाइनें प्रत्येक पद्य के अंत में आती हैं।

हम देखते हैं कि किसी महान् व्यक्तित्व का आश्रय लेकर जो कविता खड़ी होती है, वह 'क्लासिक' (स्थायी-साहित्य की वस्तु) हो जाती है, पर शर्त यह कि कविता भी उस व्यक्ति के अनुरूप ही होनी चाहिए। हम कह सकते हैं कि तुलसी और सूर यदि 'राम' और 'कृष्ण' के स्थान पर किसी साधारण आश्रयदाता के संबंध में काव्य रचना करते—जैसा देव, मतिराम आदि ने किया था—तो उनकी कविता को और उनको कविता-क्षेत्र में इतना ऊँचा स्थान न प्राप्त होता। इसी प्रकार शिवाजी के समान उन्नत और लोकप्रिय वीर, भूषणके काव्यको चिरस्थायी बनानेमें सहायक हुआ। ठीक यही बात सुभद्राजीकी कविता और रानी लक्ष्मीबाईके व्यक्तित्व के संबंध में भी कही जा सकती है। एक वीर रमणी के प्रति एक स्त्री-कवि के उद्गार होने के कारण ही इस कविता में एक विशेष आकर्षण और ज़िंदादिली आगई है, जो कि शायद किसी पुरुष कवि के काव्य में नहीं आ सकती है।

इस कविता से कोई उद्धरण देने की आवश्यकता नहीं है। यह आद्योपांत सुंदर है। आपने इसमें दिखला दिया है कि एक स्त्री वीर रस का कितना 'मीठा' काव्य निर्माण कर सकती है।

करुण रस

बहन आज फूली समाती न मन में।
तड़ित् आज फूली समाती न घन में॥

घटा है न फूली समाती गगन में।
लता आज फूली समाती न बन में॥
मैं हूँ बहन किंतु भाई नहीं है।
है राखी सजी पर कलाई नहीं है॥
है भादों घटा किंतु छाई नहीं है।
नहीं है ख़ुशी पर रुलाई नहीं है॥

अंतिम चार पंक्तियाँ सचमुच बहुत सुंदर हैं। है बहुत साधारण बात, पर इतने सुंदर रूप से कह दी गई है कि हृदय पर बड़ा असर होता है। काव्य शास्त्र की दृष्टि से यदि देखें तो कह सकते हैं, इसमें और इसी प्रकार की दो एक और कविताओं में भी करुण रस का परिपाक बहुत सुंदर रीति से हुआ है।

राष्ट्रीय भाव

सुभद्राजी की बहुत सी कविताएँ राष्ट्रीय भावों से भी ओत-प्रोत हैं। इसका एक कारण है। इस देश की अग्रगण्य देश-भक्त और समाज-सेवी महिलाओं में आपका भी आदरणीय स्थान है। देश-प्रेम से संबंध रखनेवाली कविताओं की आत्मा में सत्य और सुंदर तो हम देखते ही हैं, पर उनके व्यक्तीकरण में जैसा चाहिए ओज की बहार भी अच्छी देखने में आती है—

विजयिनी माँ के वीर सुपुत्र
पाप से असहयोग लें ठान।

गुँजा डालें स्वराज्य की तान
और सब हो जावें बलिदान ॥

सबल पुरुष यदि भीरु बनें तो
हमको दे वरदान सखी!
अबलाएँ उठ पड़ें देश में
करें युद्ध घमसान सखी ॥

पंद्रह कोटि असहयोगिनियाँ
दहला दें ब्रह्मांड सखी ।
भारत-लक्ष्मी लौटाने को
रच दें लंकाकांड सखी ॥

इसी प्रकार मेरी कविता, जलियाँवाला बाग़ में वसंत, विजयी मयूर आदि अनेक कविताएँ भी राष्ट्रीय भावनाओं से ओत-प्रोत हैं, जिनका रसास्वादन पाठक स्वयं ही करेंगे ।

तुक

सुभद्राजी की कविताओं के इस संग्रह में आई हुई कविताएँ प्रायः सभी तुकांत हैं। आपका तुक बहुत दृढ़ और आकर्षक होता है। प्रायः अंतिम शब्द और अक्षर दोनों ही की ध्वनि का तुक बहुत अच्छा और गठा हुआ होता है। उदाहरण के लिए—

…खाली हाथ चली आई।
…फिर भी नाथ चली आई॥
…इसी पुजारिन को समझो।
…इसी भिखारिन को समझो॥

…अलौकिक रूप था।
…स्वरूप अनूप था॥
…गई थी भक्त मैं।
…अटल आसक्त मैं॥

उल्लिखित पंक्तियों के अतिरिक्त इस संबंध में विजया-दशमी, चलते समय, शिशिर समीरण, बालिका का परिचय आदि कविताएँ भी ध्यान देने योग्य हैं। समष्टि रूप से सुभद्राजी की कविता के संबंध में मेरी यह धारणा है कि प्रत्येक दृष्टि से आपका कविता कलाप सराहनीय है। आप बहुत सरल आडंबर-शून्य शब्दों में अपनी सच्ची अनुभूतियों का सच्चा और प्रायः पूरा चित्र सामने रखने में समर्थ होती है। करुण रस और प्रसाद गुण आपकी विशेषताएँ हैं। यों तो बड़े-बड़े महा-कवियों के संग्रह में भी ढूँढ़ने से काफ़ी संख्या में शिथिल और आकर्षण-शून्य पद मिलेंगे, पर आप की अधिकतर कविताएँ मनोरम और सुंदर बन पड़ी हैं।

बच्चन-लिखित

मधुशाला

की विहार के लिए हमने सोल एजेंसी ले ली है। वर्तमान काव्य-धारा में मधुशाला एक स्वर्गीय उच्छ्वास है। जिसने इसे न पढ़ा, वह एक अलभ्य आनंद से वंचित रहा। आज ही एक प्रति के लिए हमें आर्डर दीजिए। मूल्य १) रुपया। विक्रेताओं के लिए ख़ास रियायत।

ख़य्याम की

मधुशाला

के अनुवादक भी हिंदी के सुप्रसि
तेजस्वी कवि बच्चन ही हैं। उमर ख़य्याम की
का यह अनुवाद अद्भुत है, अद्वितीय है। म
के साथ ही इसकी भी एक प्रति मँगान
भूलिए। मूल्य केवल बारह आना।

भारती-भवन, आरा

लीला

मुक्त—लिखित

एक नवीन, चमत्कारपूर्ण, मौलिक
। मुक्त जी ने पाँच वर्षों के बाद अपनी यह
हिंदी को भेंट की है। जो लोग मुक्तजी
-सिक्त लेखनी से परिचित होंगे, उन्हें इस
के बारे में कुछ कहना न होगा—इसका
कुल नए ढंग का है, प्रेम का मनोवैज्ञानिक
और करुणा का अजस्र प्रवाह देखकर आप
हो जायँगे। आज ही अपने पुस्तक - विक्रेता
माँगिए या हमें आर्डर दीजिए।

भारती-भवन, आरा।